जगत् गुरु

(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)

प्रकाशक :-

मकतबा जमाअत इस्लामी (हिन्द)

रामपुर (उ० प्र०)

दर्सगाह जमाअत इस्लामी, हिन्दी प्रकाशन

जगत् गुरु

(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)

अबू ख़ालिद, एम० ए०

—:(०):—

मकतबा जमाअत इस्लामी हिन्द

रामपुर उ० प्र०

प्रथम हिन्दी संस्करण अप्रैल १९५७

२,०००

अनुवादक शहबाज़ हिन्दी

शंकर प्रेस, रामपुर में मुद्रित होकर
मक्तबा जमाअत इस्लामी (हिन्द) रामपुर से
प्रकाशित हुई।

मूल्य १)

भूमिका

इस्लाम धर्म के दो अत्यन्त महत्व-पूर्ण आधार है। एक तो '.कुर्आन मजीद', जो आदि से अन्त तक दैव-वाणि है, और दूसरा सब से अन्तिम ईशदूत् और सन्देष्टा 'हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का पवित्र जीवन चरित्र, जो केवल संदेश पहुँचाने वाले ही नहीं थे अपितु .कुर्आन मजीद के आदेशानुसार मानव चरित्र का उच्चतम नमूना भी थे। यही कारण है कि .कुर्आन मजीद को उसकी शुद्ध स्प्रिट में समझने के लिये आपके जीवन चरित्र की जानकारी अनिवार्य है।

उर्दू भाषा में इस विषय पर बहुत सी पुस्तकें लिखी गई हैं। किन्तु अधिकाँश ऐतिहासिक ढंग की हैं। ऐसी पुस्तकें बहुत कम हैं जिन में आप (स०) को एक जीते जागते विश्व व्यापी आन्दोलन के अमर नायक के रूप में व्यक्त किया गया हो।

अबू ख़ालिद साहब एम० ए० की किताब 'हादिये आज़म' में कुछ कुछ इसका ध्यान रखा गया है। उन्होंने यह पुस्तक मुसलमान बच्चों के लिये लिखी थी। हमने हिन्दी में अनुवाद करते समय इसका ध्यान रखा है कि बच्चे तथा बड़े, मुस्लिम तथा अमुस्लिम सभी इस से लाभ उठा सकें।

उर्दू में ये पुस्तक दो भागों में अलग अलग छपी है। हिन्दी में दोनों को इकट्ठा कर दिया गया है।

शहबाज़

विषय सूची

सत्य के लिये मातृ भूमि भी छोड़ी

सारी तारीफ़ अल्लाह के लिए है जो हमारा पैदा करने वाला और इस दुनिया का अस्ल हाकिम है। फिर दरूद सलाम उस प्यारे नबी पर जिसने इंसानों को सीधा रास्ता दिखाया और अल्लाह के दीन पर चलना सिखाया।

पैदाइश: मुस्लिम समाज में रबीउलअव्वल का महीना बड़ा मुबारक समझा जाता है। यह महीना हमारे लिए और सच पूछो तो सारे इसानों के लिए कभी न भूलने और हमेशा याद रखने का महीना है। अब से कोई चौदह सौ साल पहले इसी की नौ तारीख़ को सोमवार के दिन प्रातः काल प्यारे नबी (उन पर दरूद और सलाम) इस दुनिया में पधारे थे मिस्र के एक आलिम महमूद पाशा फ़लकी ने हिसाब

लगाकर बताया है कि अंग्रेज़ी महीने अपरैल की २० तारीख और सन् ५७१ इसवी था।

अब से चौदह सौ साल पहले अरब और सारी दुनिया का क्या हाल था तुम्हें मालूम हो और उस पर विचार करो, फिर यह देखो कि आप ने इस बिगड़ी हुई दुनिया को कैसे संवारा, तो तुम्हारी समझ में आएगा कि यह दिन सारे इंसानों और पूरी दुनिया के लिए कितना बड़ा और कैसी ख़ुशी का दिन है।

.........और आज भी जब कि चारों ओर लूट मार चोरी, झूठ, छल कपट, मद्यपान, निर्लज्जता तथा कुकर्म का अंधेरा छाया हुआ है, यही एक दिन ऐसा है जो हमें एक ऐसे महापुरुष की याद दिलाता है जो रहती दुनिया तक अंधेरे को उजाले से बदलता रहेगा। दूर दूर फैले हुए अंधकार में प्रकाश का अकेला मीनार !!!

आप पैदा हुए, आप के दादा मियां अब्दुल मुत्तलिब ने आप का नाम मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) रखा। लोगों ने पूछा यह नाम क्यों रखा? बोले मैं चाहता हूं कि मेरे बेटे की सारी दुनिया

तारीफ़ करे। अल्लाह ने उनकी इच्छा पूरी की।

हलीमा सादिया की गोद में: उस ज़माने में अरब का यह रिवाज था कि शहर के बड़े लोग अपने बच्चों को दूध पिलवाने और पलने बढ़ने के लिए देहात में भेज देते थे ताकि वहां की खुली हवा में रहकर खूब मोटे ताज़े हो जाएँ। उस ज़माने में अरब के देहात की भाषा शहरों से अधिक स्वच्छ और ज़ोरदार होती थी। देहात में रहकर बच्चों की भाषा खूब अच्छी हो जाती थी। प्यारे नबी को भी इस रिवाज के मुताबिक हलीमा नाम की एक दाई को सौंप दिया गया। दाई हलीमा जिस क़बीले की थीं उसका नाम बनीसाद था इसलिए उन को हलीमा सादिया कहते हैं। प्यारे नबी की अम्मी जान ने आप को दूध पिलाया। कुछ और औरतों ने भी, मगर सब से अधिक दिनों तक दाई हलीमा ही ने आप को दूध पिलाया आप हलीमा सादिया के पास लग भग ४ साल रहे। आप हलीमा और उनके बच्चों को बहुत चाहते थे। नबी हुए तो हलीमा, उनके पति और बच्चे सब मुसलमान हो गए।

अम्मी जान का साया सर से उठ गया: चार

साल की आयु से अम्मी जान के पास रहने लगे सन् ५७५ ७६ में जब आप छः साल के थे वह आप को साथ लेकर मदीने गईं। वहां से वापसी में बीमार पड़ीं और उनका देहान्त होगया मक्के और मदीने के रास्ते में "अब्वा" नाम का एक स्थान है, वहीं दफन हुईं। अब्बू मियां जन्म से पहले ही मर चुके थे। अब अम्मी जान भी चल बसीं आप यतीम हो गए।

'उम्मे ऐमन' आप की खिलाई थीं। वहाँ से आप को दादा मियां के पास लाईं। उन को बहुत दुख हुआ पर क्या करते। मरना जीना खुदा के हाथ में है। मरना सब को है। आई हुई घड़ी को कौन टाल सकता है।

बड़े होने पर एक बार प्यारे नबी 'अब्वा' के स्थान से गुज़रे। अम्मी जान की क़ब्र देख कर आप का दिल भर आया। आप की आँखों में आंसू देख कर साथी भी रोने लगे।

दादा मियां के साथ: दादा मियां आप को बहुत प्यार करते थे। काबे की छांव में उन के लिए फर्श बिछाया जाता। उस पर अकेले वही बैठते किसी

दूसरे को आज्ञा न थी। प्यारे नबी छोटे थे। आकर उस पर बैठ जाते। लोग चाहते कि उठाकर अलग बैठला दें। दादा मियां रोक देते। कहते बैठने दो। फिर सिर और पीठ पर हाथ फेरते और पास ही बैठला लेते।

चचा अबूतालिब की देख रेख में: आठ साल के थे कि दादा जान की मृत्यु हो गई। यह मक्के ही में सन् ५७८ की बात है। मरते समय दादा मियाँ ने आप को चचा अबूतालिब को सौंपा। वह आप के सगे चचा थे। एक मां से तीन भाई अबूतालिब, ज़ुबैर और प्यारे नबी के अब्बू मियाँ अब्दुल्लाह।

चचा अबूतालिब बहुत तङ्ग हाल थे। उनके अपने भी बहुत से बच्चे थे। फिर भी वह अपने अच्छे भतीजे प्यारे नबी को बहुत प्यार करते थे। अपने पास सुलाते, जहाँ जाते अपने साथ रखते।

आप ने बचपन में बकरियां चराईं। नबी होने पर एक बार आप के साथी झरबैरियां तोड़ रहे थे आपने कहा "काली काली तोड़ते जाओ। बड़ी मज़ेदार होती हैं। यह तब का अनुभव है जब मैं बकरियाँ चराता था।" साथियों ने पूछा "ऐ अल्लाह के रसूल, आपने

बकरियाँ भी चराई हैं ?" बोले "हाँ, मैंने बहुत थोड़ी मजदूरी पर मक्के वालों की बकरियां चराई हैं"।

बुरे बच्चों की भांति व्यर्थ खेलों में आप अपना समय नष्ट नहीं करते थे। ऐसे किसी जलसे या सभा में जाना आप को पसन्द न था जहां निर्लज्जता और फूहड़पन की चर्चा हो। आज कल जैसे खेल तमाशे तो ख़ैर उस ज़माने में न थे, मगर जो थे भी उन में कभी आप सम्मिलित नहीं हुए। निस्संदेह अच्छे बच्चे ऐसे ही होते हैं। आप जैसा बच्चा तो न हुआ न कभी होगा। दुनिया के सारे बच्चों के लिए आप का बचपन आदर्श और नमूना है।

नबी होने तक

फ़िजार की लड़ाई: पन्द्रह साल के थे, जब आप ने फ़िजार की लड़ाई में भाग लिया। इस नाम से कई लड़ाइयाँ हुई थीं। अन्तिम में आप भी उपस्थित थे। अपने चचा लोगों को तीर उठा उठा कर देते थे। नबी होने के बाद एक बार उस लड़ाई की बात करते हुए आप ने फ़रमाया "मैं आज भी नहीं सोचता कि मैं भाग न लेता तो अच्छा था"। बात यह है कि इस बार अन्याय आप के ख़ानदान की ओर से न था।

हिलफ़ुल फ़ुज़ूल: फ़िजार की लड़ाई में बड़ी मार काट हुई। बहुत आदमी मारे गए। उस के कुछ दिन बाद कुछ लोग अब्दुल्लाह बिन जुदआन नामक एक आदमी के घर में इकट्ठा हुए। खाना पीना हुआ।

फिर सब लोग सिर जोड़ कर बैठे और प्रतिज्ञा की "हम सताए जाने वालों की सहायता करेंगे। हक़दार को उसका हक़ दिलाएंगे। ग़रीबों का दिल रखेंगे, मुहताजों के काम आएंगे।

अरब में यह अपने प्रकार की पहली प्रतिज्ञा थी। जहां लूट मार दिन रात का खेल हो, जहाँ अपनी नाक ऊँची रखने के लिए, झूठी बड़ाई के वास्ते सैकड़ों साल तक लड़ाइयाँ ठनी रहती हों, जहां कमजोरों को सता कर लोगों के हृदय में नरमी की एक लहर भी न उठती हो वहां नेकी और भलाई की ऐसी पवित्र और अच्छी प्रतिज्ञा। आप बाद में भी प्रायः फरमाया करते-"अब्दुल्लाह बिन जुदआन के घर पर जो "प्रतिज्ञा" हुई थी वैसी प्रतिज्ञा कोई आज भी करे तो मैं उसके साथ हूं। उस प्रतिज्ञा के बदले यदि कोई मुझे सुर्ख़ ऊँट भी देता तो मैं ठुकरा देता"। सुर्ख़ ऊँट बहुमूल्य होते हैं। इस प्रतिज्ञा को इतिहास में "हिलफ़ुल फ़ुज़ूल" कहते हैं।

शाम की यात्रा: बीबी ख़दीजा एक बड़ी धनवान स्त्री थीं। लोग उनका बड़ा आदर करते थे उनका बड़ा व्यापार था। अपने रुपये से लोगों को तिजारती

यात्रा पर भेजतीं । मुनाफ़ा में उनको भी साझी बनातीं । प्यारे नबी की सच्चाई की मक्के में बड़ी चर्चा थी । लोग आपको "अमीन" कहकर पुकारते थे । आपकी सच्चाई और ईमानदारी की चर्चा सुनी तो बीबी ख़दीज़ा ने इच्छा की कि आप उनका तिजारती माल लेकर यात्रा करें ।

पचीस साल के थे जब आप बीबी ख़दीजा के .ग़ुलाम "मैसरा" के साथ सन् ५६५ में शाम की यात्रा पर रवाना हुए । आप ने ऐसी मेहनत, सूझबूझ और ईमानदारी से काम किया कि पहले से कहीं अधिक मुनाफ़ा हुआ । बीबी खदीज़ा पर इस का बड़ा असर पड़ा । वह बहुत प्रसन्न हुईं । जितना तै हुआ था उस से अधिक आपको दिया ।

विवाह: शाम की यात्रा से लौटे । 'मैसरा ने आप की ईमानदारी' कारोबार में होशयारी, सच्चाई, हरेक के साथ हमदरदी, प्रेम और इनसानियत का आँखों देखा हाल ब्यान किया । बीबी ख़दीजा ने विवाह का संदेश भेजा । आप राज़ी हो गए । दिन और समय तै हुआ । आप बीबी खदीजा के घर पर पहुँचे । चचा भी साथ थे । सादगी और ढङ्ग से

विवाह हुआ। क़ुरैश के बड़े बड़े सरदार मौजूद थे। हज़रत अबुबक्र (रज़िअल्लाहु अनहु) भी सम्मिलित थे।

विवाह के समय आप की आयु पचीस साल थी। और बीबी ख़दीजा की चालीस साल उन के दो बिवाह पहले भी हो चुके थे। दोनों पति मर चुके थे।

प्यारे रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के मदीने जाने अठाईस साल पहले बीबी ख़दीजा का विवाह आप के साथ हुआ। नबी होने के बाद तेरह साल तक इस नेक बीबी ने वह सारी तकलीफ़ें और मुसीबतें आप के साथ झेलीं जो दीन के फैलाने में पेश आईं। एक साहसी सच्ची मुसलमान स्त्री और पतिवर्ता पत्नी की तरह प्रत्येक संकट में आप का साथ दिया। प्रत्येक दुख दर्द में बराबर की हिस्से दार रहीं।

नबी होने से पहले: आप की अच्छी आदतों की मक्के में चर्चा थी। आप सदा सच बोलते थे। लोग अपनी अमानत आप के पास रख जाते आप उनकी अमानत ज्यों की त्यों लौटाते। आप

ने कभी शराब न पी। बुतों की पूजा न की। मेलों ठेलों और त्योहारों में न गए। गए तो बुरी बातों के पास न फटके। अब्बू मियां ने थोड़ी पूँजी छोड़ी थी। बकरियाँ चराईं, तिजारत की। अपनी रोज़ी मेहनत मशक्कत से कमाई। खुदा का शुक्र अदा किया।

हिरा के गुफ़े में इबादत: मक्के के निकट 'हिरा' नाम की एक पहाड़ी है। आप घर से सत्तू पानी लेते। उसी पहाड़ी के एक गुफे में चले जाते। कई कई दिन वहां रहते। अल्लाह की इबादत करते। फिर घर आते, सत्तू पानी लेते और लौट जाते।

नबी होते हैं: एक दिन उसी गुफ़ा में थे। अल्लाह ने अपना फ़रिश्ता भेजा उस फ़रिश्ते का नाम जिबरील है। फ़रिश्ते अल्लाह के पैदा किए हुए हैं। उसका हुक्म बजा लाते हैं। उसका हुक्म नबियों तक पहुँचाते हैं। जिबरील अल्लाह का संदेसा लाए। यह संदेसा क्या था। अल्लाह का कलाम। यही हमारा .कुरान पाक जिसकी बताई हुई राह पर हम लोग चलते हैं।

रमज़ान की सत्तरह तारीख थी। अंगरेजी हिसाब से छः अगस्त सन् ६१० ईसवी। आप की आयु उस

समय चालीस साल की थी। पहले वह सूरः उतरी जिसका पहला शब्द (اقرء) 'इक़रअ' है। उस का नाम सूरः अलक़ (علق) है।

क़ुरान पाक से संसार ने प्रकाश पाया। सीधा रास्ता देखा। अच्छाई बुराई को पहचाना। दुनिया के सुधार का सामान हुआ। इंसानों को जीवन व्यतीत करने का पूरा क़ानून मिला। आप नबी हो गए। भटके हुओं को राह दिखलाने लगे। अंधेरे में उजाला कर दिया। यह उजाला घर वालों के लिए भी था, बाहर वालों के लिए भी। अपने खानदान, अपने ही देश नहीं, सारे संसार के लिए, सब इंसानों के लिए।

नबी होने के बाद

ख़ास ख़ास लोगों में दीन का प्रचार: तीन साल ख़ास ख़ास लोगों को समझाते रहे। घर वालों को समझाया। जिन से कुछ लगाव था उन तक अल्लाह का संदेश पहुँचाया। जिन को देखा नेकी भलाई की खोज में हैं उन को मंजिल का निशान बतलाया। थोड़े से लोग मुसलमान हुए। पहाड़ की किसी घाटी में जमा होते। नमाज़ पढ़ते। अल्लाह की इबादत करते। दीन की चर्चा करते। कुछ दिनों के बाद "अरक़म" के घर में जमा होने लगे वहीं नमाज़ पढ़ते। दीन की बातें करते। यह घर 'सफ़ा' पहाड़ की तली में था।

आप लोगों को समझाते रहे। अलग अलग एक एक से मिलते। कहते इबादत के लायक़ केवल

अल्लाह है। दिल से उस को मानो ,ज़ुबान से उसके मालिक होने का इक़रार करो।" काफ़िर हर घड़ी इसी फेर में रहते, मुसलमानों को कैसे सताएँ। बहुत दुख देते फिर भी जी न भरता। दीन धीरे धीरे फैलता रहा। काम आगे बढ़ता गया। मुसलमान चालीस होगए। चालीसवें हज़रत उमर (रज़िअल्लाहु अनहु) थे।

पहले मुसलमान होने वाले: अल्लाह का संदेश पहुँचाना आसान न था। मुसलमान होना भी काफ़िरों की दुशमनी मोल लेना था। मक्का बुत पूजने वालों का गढ़ था। काबे के मुजाविरों और मूर्त्तियों की रक्षा करने वालों का केन्द्र था। सारा अरब उनका आदर करता था। उन को बड़ा मानता था। प्यारे रसूल ने उन लोगों से बातचीत की जिन में धर्म की ओर कुछ रुचिपाई, जिन्हें देखा सत्य की खोज में हैं, स्त्रियों में सब से पहले बीबी ख़दीजा पुरुषों में हज़रत अबूबक्र, बालकों में हज़रत अली और गुलामों में हज़रत ज़ैद बिन हारिसा (रज़ियल्लाहु अनहुम वरज़ू अनहु)।

सत्य की पुकार सफ़ा पहाड़ पर: अल्लाह का

दीन अब तक एक एक आदमी के पास अलग अलग पहुँचाते थे। एक दिन आप सफ़ा पहाड़ पर चढ़ गए। वहाँ से पुकारा :– "ऐ 'ग़ालिब' की संतान," लोग दौड़ पड़े। पूछा "क्या है ?" आपने कहा "तुम लोग मुझे सच्चा समझते हो या झूठा ?" सब ने एक स्वर में उत्तर दिया "आप सच्चे हैं, अमानत दार हैं। हम आप को 'सादिक़ (सदा सच बोलने वाला) और 'अमीन (जो अमानत में ख्यानत न करे) कहते हैं।" आप ने कहा "देखो मैं ऊँचाई पर हूँ। दूसरी ओर भी देखता हूं। तुम पहाड़ की तली में हो। तुम को दूसरी ओर की ख़बर नहीं। यदि मैं तुम से कहूँ कि एक सेना 'सफ़ा' पहाड़ के पीछे तुम्हारी ताक में है, तो तुम विश्वास करोगे ?" सब एक साथ बोले "हां, क्यों नहीं, अवश्य, अवश्य, तुम सच्चे हो। तुम कभी झूठ नहीं बोले।" आप ने कहा तो फिर मैं ही तुम को यह सूचना देता हूँ कि आने वाले भारी अज़ाब से डरो। मरने के बाद पूछ गछ होगी। मैं तुम्हें संसार में कोई लाभ नहीं पहुँचा सकता। मरने के बाद कोई हिस्सा नहीं दिला सकता। मरने के बाद और इस जीवन में छुटकारे की एक ही राह है।

कहो अल्लाह एक है। उसका कोई साझी नहीं। मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) उस के बन्दे और रसूल हैं।"

—यह पुकार थी या बिजली की कड़क,
जिस से अरब की सारी ज़मीन हिलगई।
कड़क थी या सुधारक की मुनादी।
अरब की पृथ्वी जिसने हिलादी॥
लगन नूतन सी हर मन में लगादी।
सदा दी एक, और बसती जगादी॥
हुई कुछ ऐसी सत - संदेश - चर्चा।
कि पर्वत और बन सब गूँज उठ्ठा॥

——अबूलहब बड़ा क्रोधित हुआ। बोला तुम ने इसीलिए हम को पुकारा था। फिर आप बाज़ार में सत्य की ओर बुलाते तो वह दुष्ट पीछे पीछे चलता। आप पर पथराव करता। इतना पथराव कि आप की मुबारक एड़ियाँ घायल होजातीं।

विरोध में प्रोपेगेन्डा : 'मुग़ीरा' का बेटा 'वलीद' '.क़ुरैश' का एक काफ़िर सरदार था। एक दिन लोग उसको घेरे बैठे थे। उसने कहा "भाइयो, हज के दिन आरहे हैं। अरब के प्रत्येक भाग से लोग यहाँ

आएंगे। मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को तुम जानते ही हो यह उन में जाएंगे और अपना दीन फैलाएंगे। कोई एक बात तै करलो। उन को झुठलाने के लिए सब मिलकर वही एक बात कहो। ऐसा नहीं कि कोई कुछ कहे, कोई कुछ। और उन को झूठा साबित करने के बदले तुम स्वयं झूठे बन जाओ।" लोगों ने कहा "वलीद, तुमही बतलाओ" उसने कहा "नहीं यह नहीं। पहले तुम लोग कोई बात तैकरो। मैं सुनने के बाद कुछ राय दूँगा।"

एक ने कहा हम कहेंगे यह "काहिन" हैं, जैसे पाखंडी लोग होते हैं, लोगों के भाग्य अनाप शनाप बतलाते हैं। पैसे लेते हैं।" वलीद ने कहा "यह बात जमेगी नहीं। मैंने काहिनों को देखा है। वह मिन-मिनाते हैं। उन के वाक्य नानार्थ होते हैं। वह टुकड़े टुकड़े करके बोलते हैं। इन की बात का वह ढंग नहीं।" दूसरा बोला "हम कहेंगे इनका दिमाग़ ख़राब है। (तोबा, तोबा,) पागल हैं। इनकी बात पर ध्यान न दो।" वलीद ने कहा "उनके कथन को दीवानों की बड़ साबित करना कठिन है। यह बात भी झूठी पड़ जाएगी।" तीसरे ने कहा "अच्छा तो फिर हम

कहेंगे यह कवि हैं कवियों का क्या ठिकाना।" वलीद ने इस राय का भी विरोध किया। चौथा बोला "अच्छा, तो हम कहेंगे यह ज़ादूगर हैं। इन की बात में न जाओ।" वलीद ने कहा "यह भी ग़लत, वह झाड़ फूँक, गएडा, तावीज़ करते हैं।" सब ऊब कर एक साथ बोले "तो फिर आप ही बतलाइए। हमारी तो बुद्धि काम नहीं करती।" वलीद ने कहा "खुदा की क़सम, उनके कथन में विचित्र मिठास है। उनका कथन ऐसे भारी भरकम बृत्त की भाँति है जिसकी जड़ें भूमि में दूर दूर तक फैली हों और जिस की शाखाएं फलदार हों। उन के आगे तुम्हारी एक न चलेगी। मेरी समझ में तो आता है कि तुम लोग कहो "यह जादूगर हैं। अपनी बातों से पति पत्नि में फूट डालते हैं। पिता पुत्र में बैर उतपन्न कर देते हैं। सम्बन्धी कुटुम्बियों को एक दूसरे से बिछुड़ा देते हैं।" - यह तै होगया। हज के अवसर पर यह लोग हरेक से यही कहते फिरते। किन्तु सत्य की बाट कौन मार सका है। परिणाम उलटा हो रहा था।

सुधारने आए सुधर गए: आप के एक मित्र थे 'ज़िमाद बिन सालबा'। नबी होने से पूर्व उन से बड़ी

मित्रता थी। उन से लोगों ने कहा तुम्हारे मित्र को पागलपन होगया है। उन का हाल मालूम करो। वह कुछ झाड़ फूँके करते थे। आप के पास आये, बोले "तुम्हें क्या होगया है? कहो तो कुछ फूँक डाल दूँ। आप ने उत्तर दिया "सारी प्रशंसा अल्लाह ही के लिये है। हम उसी की स्तुति करते हैं और उसी से सहायता माँगते हैं। जिस को अल्लाह सीध मार्ग दिखला दे, उसे कोइ पथ-भ्रष्ट नहीं कर सकता और वह जिसे पथ-भ्रष्ट करदे, उसे कोई सीधा मार्ग नहीं दिखला सकता। और मैं इस बात का साक्षी हूँ कि एक अल्लाह के अतिरिक्त कोई 'इलाह' नहीं और मैं इस बात का भी साक्षी हूं कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहिवसल्लम) अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं। तत्पश्चात् ...... आगे कुछ कहने ही वाले थे कि ज़िमाद ने कहा "फिर तो पढ़िये"। आप ने तीन बार यही शब्द दुहराए। वह सुनते रहे। फिर बोले "मैं ने काहिनों को देखा है। पागलों तथा कवियों से भी पाला पड़ा है। इस प्रकार के शब्द किसी से नहीं सुने। तुम तो समुद्र की गहराइयों तक पहुँच गये। तत्व को पाचुके हो। हाथ बढ़ाओ मैं

मुसलमान होता हूँ"। आप ने हाथ बढ़ा दिया। ज़िमाद मुसलमान हो गए।

कैसे अज्ञान थे! सत्य का मोल तोल करने आए: अल्लाह का दीन धीरे धीरे फैल रहा था। काफ़िर परोशान थे। क्या करें, कैसे सत्य की राह रोकें। प्यारे रसूल अकेले हैं। थोड़े से साथी हैं। उन के पास कोई भौतिक शक्ति नहीं। देखने में बेबस हैं। मजबूर हैं। फिर भी उन की बात है कि मन में समा जाती है। सब अपने हैं। हमारी कोई सुनता नहीं। बाप दादा का धर्म मिट रहा है। 'लात' और 'उज़्ज़ा' की ख़ुदाई को आशंका है। चलो अबूतालिब के पास चलें। धर्म तो उन का भी वही है जो हमारा है। इन मूर्तियों की प्रतिष्ठा का, कुल की आन बान का कुछ न कुछ ध्यान उन को भी होगा। कुछ लोग एकत्र हुए। साथ मिलकर अबूतालिब के पास आए। बोले। "भतीजे को रोकिए। सारे कुल की इज़्ज़त मिट्टी में मिल रही है। हमारे आप के देवी-देवता झुठलाए जा रहे हैं। आपके भतीजे का कहना है कि हम सब मूर्ख हैं। नादान हैं। 'लात' और उज़्ज़ा' की पूजा करते हैं। इबादत के योग्य केवल अल्लाह है।

उसका कोई साझी नहीं। हम आप से 'लात' और 'मनात' के नाम पर कहते हैं, उन को समझाइए, अब पानी सिर से ऊँचा हो चुका है।" अबूतालिब ने किसी प्रकार उन से पीछा छुड़ाया, भतीजे से कुछ न कहा। प्यारे रसूल अपना काम करते रहे। दीन फैलता रहा।

……विरोधी फ़िर आए। बहुत कहा सुना। अबके धमकी भी थी, जान का भय दिला गए। अबूतालिब सोंच में पड़ गये। अब क्या करें, भतीजे को बुलाया। पास बठाया। फिर बोले। बेटा, मुझ पर इतना बोझ न डालो कि सहार कठिन हो जाये। प्यारे नबी समझे चचा साथ छोड़ रहे हैं। यह काम तो अल्लाह का था। उसी के भरोसे हो रहा था। बोले - "चचा जान, यह लोग मेरे एक हाथ में सूर्य और दूसरे में चांद लाकर रखदें तब भी इस कार्य को नहीं छोडूँगा या तो अल्लाह अपने दीन को विजयी करेगा या मैं इसी राह में मर खप जाऊंगा। यह कह रहे थे और आप की आंखों से आँसू बह रहे थे। फिर उठे और बाहर जाने लगे। चचा ने रोका वापिस बुलाया। कहा "भतीजे, जाओ अपना काम जारी रखो। अबूतालिब तुम्हें इन अन्यायियों के चिंगुल में नहीं

देगा।" बड़े असमंजस में थे। पालन पोषण की लाज मानुषिकता की मांग, तथा प्यारे नबी के जीवन का प्रत्येक अंग उन के सामने था। जो जादू की भांति उन के हृदय तथा मस्तिष्क पर छा गया था।

यह लोग फिर आए। अबकी अपने साथ 'वलीद' के पुत्र 'अमारा' को भी लेते आए। और अबूतालिब से कहा "देखिए, यह 'अमारा' है। 'वलीद' का बेटा, सुन्दर, नवयुवक, आप इसको अपना बेटा बना लीजिये और अपने भतीजे को हमारे सिपुर्द कीजिये। वह हमारे तथा आप के धर्म को झुठलाता है। बाप दादा जिस मार्ग पर चलते रहे हैं, उससे क़ुरैश ही नहीं, सारे अरब, सारे संसार, सब इंसानों को फेरने की धुन में है। बेटे के बदले बेटा लो। झगड़ा समाप्त करो।" अबूतालिब का मुँह लाल होगया। क्रोध में बोले " 'अमारा' को मैं लेलूँ खिला पिला कर मोटा करूं। अपना प्यारा बेटा तुम को देदूँ। तुम उस को क़त्ल कर डालो। अच्छे आए कहीं के। जाओ, जो तुम से बने करो। मैं इन चालों में आने वाला नहीं।"

अब क्या था। काफ़िरों के क्रोध का पारा चढ़ गया। अन्याय तथा अनर्थ की चक्की चल पड़ी।

हर क़बीला इस पर तुल गया कि उस में जो लोग मुसलमान हुए हैं, उन को पीस कर रख दिया जाए। केवल 'बनी हाशिम' ने अपने सरदार अबूतालिब का साथ दिया।

सत्य की राह में दुख झेलने वाले

बिलाल : इन को कौन नहीं जानता प्यारे नबी के 'मुअज़्ज़िन'। रहती दुनिया तक अज़ान की सदा गूंजे गी। रहती दुनिया तक उन का नाम रहेगा। यह थे परीक्षण की भट्ठी में तप कर खरा सोना साबित होने वाले। उनका मालिक दोपहर की चिलचिलाती धूप में उन को अरब की गर्म रेत पर लिटा देता। सीने पर बहुत भारी पत्थर रख देता। और कहता "मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की बुराई करो। अल्ला की इबादत से इनकार करो। या फिर समझ लो इस भारी बोझ, इस तपती हुई रेत पर तुम्हारी जान निकल जाएगी। हम तुम्हें जीवित न छोड़ेंगे। इस पीड़ा और क्लेश की अवस्था में भी संकल्प तथा विश्वास से परिपूर्ण उस मृत्यु

से खेलने वाले शूर के मुख से निकलता "अहद" "अहद" "अल्लाह एक है। अल्लाह एक है"।

अम्मार: इन को ही नहीं इन के माता पिता को भी वेदुष्ट मैदान में घसीट लेजाते फिर गर्म रेत पर नाना-प्रकार से सताते। बड़ा कष्ट पहुँचाते। किन्तु उन का विश्वास, उनका ईमान किसी भी संकट की चिन्ता न करता। एक दिन प्यारे रसूल उधर से गुज़रे। माँ तथा बेटे को देखा। अपने ईमान का मूल्य चुका रहे हैं। दीन की राह में वीरता से अन्याय एवं अनर्थ का सामना कर रहे हैं। अम्मार के पिता का नाम यासिर था। आप ने फ़रमाया "ऐ यासिर की सन्तान, धैर्य धरो और प्रत्येक अवस्था में ईश्वर को धन्यवाद ही देते रहो। तुम्हारा स्थान जन्नत है।"

यासिर यह अनर्थ सहते सहते जन्नत को सिधारे। उन की पत्नी 'समिय्या' को अबूजहल ने भाला मार कर शहीद कर डाला। माँ बाप का इस मार्ग में शहीद होना भी अम्मार को संमार्ग से न फेर सका।

ख़ब्बाब: इन के कपड़े उतार कर इन्हें अङ्गारों पर लिटा देते। ऊपर से जलता हुआ पत्थर रख देते और उन को दबाए रहते कि उठने न पाएं। यहाँ तक

कि दहकते अंगारे ठण्डे पड़ जाते।

......मगर दहकते हुए अंगारों की गर्मी उस गर्मी से प्रास्त हो गई जो ख़ुदा और उसके रसूल पर ईमान ने उनके हृदय में उत्पन्न कर दी थी। काफ़िरों की भड़काई हुई आग बुझ गई किन्तु ईमान का अंगारा भड़कता रहा। उसे कोई न बुझा सका।

सुहैब: रूम के रहने वाले थे। मक्के में आकर बस गए थे। तलवार का व्यापार करते थे। बड़े पैसे वाले थे। मदीने जाने लगे तो काफ़िरों ने कहा। "सत्य प्रिय है। अल्लाह और उस के रसूल से प्रेम का दम भरते हो। यह धन तो हमारे बीच कमाया है। इसे छोड़ जाओ तो जाओ। सुहैब मुसकुराये "मूर्खों, यह धन! इस का क्या मूल्य है। यह सत्य का मोल हो सकता है। बड़े नासमझ हो। देने वाला कौन था। रखलो इस को अपने पास। मैं जाता हूँ। इस की चिन्ता किसको है। यह सारा ब्रह्माण्ड तो सत्य का मूल्य हो ही नहीं सकता। यह कुछ ठीकिरियां क्या चीज़ हैं!!

लुबैना: हज़रत उमर की लौंडी थीं। आप मुसलमान न हुए थे। उन को मारते, बहुत मारते,

थक जाते तो रुकते और कहते–"तुझ पर तरस नहीं खा रहा हूं। थक गया हूँ।" वह जवाब देतीं– मुसलमान होजाओ, नहीं तो अल्लाह तुम को इसी प्रकार अज़ाब में डालेगा। इस सत्य पर न्योछावर होने वाली वीर नारी के धैर्य तथा दृढ़ता का भी उस नर्मी के पैदा करने में हाथ रहा होगा जिसके कारण बाद में महान् फ़ारूक़ के हृदय से ईमान का स्रोत फूट बहा।

प्यारे रसूल भी: अत्याचार और अनर्थ साथियों ही पर न थे। प्यारे रसूल भी सताए जाते थे। और बुरी तरह साताये जाते थे। कभी गले में फन्दा डाला गया। अबुबक्र सिद्दीक़ ने आकर छुड़ाया। कभी सिर पर पूरी ओझ लाकर डाल दी गई। प्यारे रसूल का सिर सिजदे में था और पापी ठट्ठे लगा रहे थे। अंत में आप की चहीती बेटी हज़रत फ़ातमा (रज़िअल्लाह, अनहा) को हाल मिला। वह दौड़ी हुई आईं, और आप के सिर से ओझ हटा कर अलग फेंक दी। हंसने वालों के लिए रोने का दिन भी आया। धैर्य एवं आत्मत्याग की यह साक्षात् मूर्ति अपने स्थान पर दृढ़ रही। कार्य होता

रहा। दीन फैलता गया !!

फिर बहकाने आए

बातिल की ओर से सौदेबाज़ी की एक और चेष्ठा: दीन फैल रहा था, तेज़ी से। प्रत्येक बाधा से निमटता, प्रत्येक पत्थर को राह से हटाता, जिस प्रकार पहाड़ी नदी चट्टानों को काटती, पत्थरों को बराबर करती, अपनी राह बनाती बहती चली जाती है। काफ़िर बौखलाये हुये थे। उन की मति मारी हुई थी। जो उपाय सोचते उलटा पड़ता। हार गए। चालबाज़ियों से कुछ लाभ न हुआ। पहले प्यारे नबी से किसी प्रकार का संबंध रखने वाले लोग नए दीन में जारहे थे। लाचार, मुहताज, लौंडी, ग़ुलामों और नर्म दिल के आदमियों ने इस पुकार की ओर पांव बढ़ाया। किन्तु अब ...... अब तो

'हमज़ा' जैसे शूरवीर साथ छोड़ रहे थे। पत्थर पसीज गये। चट्टानों से सोत उबल पड़े।

.... फिर एकत्र हुये और सब मिल कर आप के पास आये। 'उतबा' नाम का एक काफ़िर आगे आगे था। आते ही बोला, बड़े कोमल स्वर में, बड़ी नम्रता से, बड़ी चापलूसी के साथ-"मेरी सुनोगे? मैं तुम से कुछ कहने आया हूं। मान जाओ तो बड़ा अच्छा है। आप ने उत्तर दिया "कहो अबुलवलीद, मैं सुनने को तय्यार हूँ।" उसने कहा-"यह सब जो तुम करते हो, यही हमारे देवी देवताओं का अपमान, नया दीन फैलाने के लिए दौड़ धूप, यदि तुम यह सब, रुपये पैसे, सोने चांदी के लिए करते हो तो व्यर्थ हलकान होते हो। 'लात' और 'उज़्ज़ा' की बुराई करना छोड़ दो। बाप दादा के धर्म के विरुद्ध कुछ न कहो हम संपत्ति का ढेर तुम्हारे चरणों में लाकर डाल देते हैं। इतना धन कि मक्के में कोई बड़े से बड़ा धनवान भी तुम्हारी बराबरी न कर सकेगा।

यदि धन नहीं चाहते, सरदार बनने की आकांक्षा है; तो इस के लिए भी हम सब राज़ी और तय्यार

हैं। आज से तुम हमारे सरदार ही नहीं बल्कि राजा हो। किन्तु शर्त वही है, अपना कार्य बन्द कर दो। लोगों से न कहो कि अल्ला एक है, उस का कोई साझी नहीं।

यह भी नहीं,। किसी रूपवती, चांद जैसी सुन्दर स्त्री से विवाह करना चाहते हो तो यह भी मंज़ूर है, हम यह भी कर देंगे। परन्तु हमारे देवी देवताओं को बुरा न कहो।"

आप सुनते रहे जब वह चुप हुआ, तो आप ने क़ुरानपाक की एक सूरः हामीम सिजदा की आयतें पढ़नी आरम्भ कीं। उस ने अपने दोनों हाथ पीठ के पीछे ज़मीन पर टेक दिये। और मुग्ध होकर सुनता रहा। आप सिजदे के स्थान पर पहुंचे सिजदा किया। फिर उसकी ओर देखा और बोले-"तुमने सुना? यह तुम्हारी बात का उत्तर है।"

'उतबा वहां से उठा, और साथियों की ओर चला उस के चेहरे का रंग बदला हुआ था। काफ़िरों ने देखा, आपस में कहने लगे-"वह आ तो रहा है किन्तु उस का चिहरा कुछ और कह रहा है। समीप आया तो चारों ओर से लोग चिल्लाए-"कहो क्या ख़बर

लाये।" उत्तर मिला-"ख़बर यह है कि आज जो कथन मैं ने सुना है, ऐसा कथन मैं ने कभी नहीं सुना। न वह कविता है, न जादू, न काहिनों की बड़। मेरी मानो तो इस मनुष्य को इसके हाल पर छोड़ दो। उस को विजय हुई तो तुम्हारा क्या बिगाड़ेगा आख़िर तुम ही में से एक वह भी है, उसकी इज़्ज़त तुम्हारी इज़्ज़त है, प्रास्त होगया तुम्हारा कार्य बन आया। यही तो तुम चाहते हो। मेरी तो यही राय है। वैसे तुम्हारी इच्छा, जो जी में आये करो।"

बातिल सफ़ों में रखने पड़ रहे थे। पाँव तले से भूमि निकल रही थी। प्यारे नबी ने अपना कार्य जारी रखा। सत्य की पुकार मक्के की पहाड़ियों में गूंजती रही। कोई उसे दबा न सका। दीन फैलता रहा।

———:*:———

सत्य के लिए मातृ भूमि भी छोड़ी

हबश की पहली हिजरत : अरब से मिला हुआ हबश का देश है। वहाँ के राजा को नज्जाशी कहते थे। वह बहुत भला आदमी था। किसी पर अन्याय न होने देता। अपने पराये के साथ अच्छा व्यवहार करता। प्यारे नबी ने साथियों से कहा—"चचा के कारण तथा बनी-हाशिम के भय से यह लोग मुझ पर हाथ उठाने का साहस नहीं करते। तुम लोगों को बड़ा कष्ट देते हैं। तुम हबश चले जाओ। शान्ति होगी तो फिर चले आना। वहाँ अल्लाह की इबादत कर सकोगे। उसके बताये हुये ढंग पर जीवन तो व्यतीत होगा।" सन ६१५ ई० में आप के नबी होने के पांचवें साल, रजब का महीना था। यह थोड़े से लोग छुपते छुपाते हबश पहुंचे। उनके चले जाने की ख़बर फैली। काफ़िरों को बड़ा अचम्भा हुआ। दीन के लिये घर बार छोड़ दिया! यह कैसे लोग हैं! इन का दीन कैसा है! काफ़िरों ने समुद्र के किनारे

तक पिछा किया। यह लोग जा चुके थे। खिसिया कर लौट आये। हबश में मुसलमानों को हर प्रकार की स्वतंत्रता थी।

हबश की दूसरी हिजरत : जो लोग हबश गये थे, कुछ दिनों बाद लौट आये। उनको ख़बर मिली अब मक्के में अमन है। हज़रत उमर (रज़िअल्लाह अनहु) मुसलमान होगये। लोग खुल्लम खुल्ला नमाज़ पढ़ते हैं। कोई रोक टोक नहीं। यहाँ आये तो पहले से अधिक सताया। क्या करते, प्यारे नबी ने फ़रमाया—"जाओ, फिर हबश चले जाओ। दीन फैलाओ। दीन पर चलो। मक्का अब रहने का स्थान नहीं। फिर चले। यह यात्रा बड़ी कठिन थी। पग पग पर काफ़िरों के अनर्थ और अत्याचार का सामना था। काफ़िरों को नज्जाशी पर भी बड़ा क्रोध था। कुछ लोग पीछे पीछे गये। नज्जाशी से मिले। मुसलमानों की बुराई की। उसने काफ़िरों और मुसलमानों को दरबार में बुलाया। हज़रत अली के भाई हज़रत जाफ़र ने दरबार में भाषण दिया। भाषण बड़ा ज़ोरदार और प्रभाव-शाली था।

उन्हों ने अपने भाषण में बताया कि—"इस्लामी

आंदोलन से पूर्व अरब की क्या दशा थी। कैसी गन्दगियों और किन बुराइयों में वहां के लोग फंसे हुये थे। फिर अल्लाह ने उन के बीच रसूल भेजा इस पाक नबी ने उन को अल्लाह की राह दिखाई। मूर्ति पूजा छुड़ाई। आपस में मेल जोल से रहना सिखाया। सच बोलना, दूसरों का माल बेईमानी से न खाना, पीड़ितों की सहायता करना, अत्याचार का दृढ़ता पूर्वक मुक़ाबला करना, अल्लाह के भेजे हुये दीन पर चलना और ऐसी ही बहुत सी अच्छी बातें बताईं। हमारी काया पलट गई। हम अंधेरे से उजाले में आगये। सच्चाई को हम ने दोपहर के सूर्य की भांति देख लिया, जान लिया।

हमारा यही अपराध है। जिस के कारण हमारे देश और नगर वालों ने, कुटुम्ब तथा घर वालों ने हम को सताना आरम्भ कर दिया। हम अपने दीन के लिये-जिस राह को हमने अपने लिए ठीक समझा है, उस पर चलने के लिए-घर बार छोड़ने के लिए तय्यार होगये। यहां चले आये। तो, अब यह हम को यहां भी पनाह नहीं लेने देते। नज्जाशी पर इस भाषण का बड़ा प्रभाव पड़ा। वह रोने लगा। उसने

मुसलमानों से कहा आप मेरे देश में चैन से रहिये। आप को कोई न सतायेगा। काफ़िर अपना सा मुँह लेकर लौट आए।

बाई काट

काफ़िरों को इस पर बड़ा क्रोध था। दुर्बल और असहाय लोग नज्जाशी के दरबार में पहुंच गये। नया दीन फैलता जा रहा है। 'हमज़ा' और 'उमर' तक मुसलमान होगये। मुसलमानों की संख्या बराबर बढ़ रही है। उन के गिरोह से निकल कर लोग अल्लाह के दीन में आते जा रहे हैं। 'बनी हाशिम में जो मुसलमान होगये हैं और जो अभी मुसलमान नहीं हुये हैं वे भी खुल्लम खुल्ला मुहम्मद (सल्लाहु अलैहि वसल्लम) का साथ देरहे हैं। उन की एक नहीं चलती। चचा, बाप-दादा के धर्म पर है फिर भी भतीजे के लिये सब कुछ सहने को तय्यार है। उन का क्रोध चरम सीमा को पहुंच गया

'बनी हाशिम' का बाईकाट कर दिया जाये-पूरा बाईकाट-न उनको लड़कियां दीजायें न उन की लड़कियां ली जायें। उन के साथ लेनदेन, मेल जोल उठना-बैठना, खाना-पीना सब बन्द एक दम। एक प्रतिज्ञा-पत्र लिखा गया। काबे के द्वार पर लटका दिया गया।

'बनी हाशिम' एक घाटी में क़ैद थे। उसका नाम 'शेबे अबीतालिब' (अबूतालिब की घाटी) है। अनाज बन्द, पानी बन्द, आवश्यकता की समस्त वस्तुयें बन्द। छोटे छोटे बच्चे भूक से बिलकते, पत्तियां तथा जड़ी बूटिआं खा कर दिन काटते। पाख पर पाख इसी अवस्था में बीताते रहे। प्यारे रसूल ने इस स्थिति में भी अपना कार्य न छोड़ा। बड़ी परिक्षा थी। जिस में पूरा कुटुम्ब पड़ा हुआ था। किन्तु अपनी जगह पर अटल थे। उन को एक ही धुन थी। घाटी से बाहर आते। दीन फैलाते। लोगों से कहते फिरते कि इन बेबस मूर्तियों के आगे सिर न झुकाओ। इबादत के योग्य केवल अल्लाह है। उसका कोई साझी नहीं। मैं उस का बन्दा और रसूल हूँ।

दो साल से अधिक इसी हाल में बीत गये। इतने दिन स्त्रियों तथा बच्चों ने, बूढ़ों और जवानों ने वह कष्ट काटे कि ख़ुदा की पनाह! काफ़िर समझते थे इस बाईकाट से 'बनी हाशिम' का साहस छूट जायेगा। वह प्यारे र ल का साथ छोड़ देंगे। आप उन का साथ छूटने के भय से मूर्तियों की निन्दा छोड़ देंगे। वह पुकार जिस से उनके हृदय कांपते थे, मक्के की पहाड़ियों में न गूंजेगी। परन्तु यह कुछ न हुआ। आप ने अपना कार्य तनिक भी धीमा न किया प्रगति तीव्र ही होती गई। क र्य आगे बढ़ता ही रहा। दीन फैलता ही रहा।

अत्याचार और अनर्थ का विरोध: काफ़िरों में कुछ लोग ऐसे भी थे जिन का हृदय भीतर से पुकारता था-"यह अन्याय ठीक नहीं। यह बच्चों का बिलकना, बूढ़े मर्दों और स्त्रियों का एक घूंट पानी और एक सूखी खजूर के लिए तरसना और उसपर ठट्ठे लगानो बड़ी निर्दयता है। इस अनर्थ का अन्त होना चाहिये। इस अत्याचार के विरोध में आवाज़ न उठाना कायरता है। वे इकट्ठा हुये। पाँच आदमी थे। रात को उन्हों ने तै किया। कल बात चीत हो।

उस अन्याय-पूर्ण प्रतिज्ञा-पत्र के टुकड़े उड़ा दिये जायें जो काबे के द्वार पर लटक रहा है। बाई-काट समाप्त हो। सवेरा हुआ। काबे में काफ़िर एकत्र थे। उन मेंसे एक ने बात-चीत आरम्भ की-"हम खाते पीते हैं। और बनी हाशिम उपवास कर रहे हैं।" 'अबूजहल' बीच में बोल उठा-"तुम ही 'बनी हाशिम' का पक्ष-पात करने आये हो।" दूसरे ने कहा "यह ठीक कहते हैं। यह अत्याचार अब नहीं सहा जायेगा। तीसरे, चौथे और पांचवें ने भी साथ दिया। इसी गिरोह में और भी लोग थे जिन का हृदय भीतर से कहता था कि यह अंधेर है, इसे समाप्त होना चाहिये। प्यारे रसूल की सच्चाई, नेकी और अल्लाह की राह में दुख झेलना, आप के इन गुणों से शत्रु भी प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकते थे। अब चारों ओर से लोग पुकारने लगे। "प्रतिज्ञा-पत्र को फाड़ डालो। बाईकाट ख़तम हो। (ईश्वर की महिमा देखिये) अल्लाह का करना, काबे के द्वार की ओर लोग बढ़े तो क्या देखते हैं कि सारा काग़ज़ दीमक चाट गई। केवल अल्लाह का नाम बाक़ी है। जो झूठ था मिट गया जो सच था बाक़ी रहा।

अबूतालिब की मृत्यु : बाईकाट समाप्त हो गया। किन्तु अभी प्यारे नबी को दीन की राह में बड़े बड़े कष्ट उठाने थे। हिजरत से तीन साल पूर्व शव्वाल के मास; सन ६२० ईसवी में चचा अबूतालिब भी इस संसार से चल बसे। वह जब तक जीवित रहे, काफ़िरों का साहस न हुआ कि आप पर हाथ डालें। उनके मरते ही पापियों के रास्ते की यह बाधा भी जाती रही। उन्हों ने मरते समय कुटुम्ब वालों को बुलाया। उन से कहा-"तुम लोग अब तक इन का कहा मानोगे भले रहोगे। तुम्हारी भलाई इसी में है कि इनके बताये हुये रास्ते पर चलो। इन का कहना मानो" यह संकेत था प्यारे रसूल की ओर। मरते समय चचा अबूतालिब की आयु ८० वर्ष थी।

हज़रत ख़दीजा का स्वर्गवास: चचा अबूतालिब के देहान्त के कुछ ही दिन बाद बीबी ख़दीजा का भी स्वर्गवास होगया। देहान्त के समय उन की आयु ६५ साल थी प्यारे रसूल से विवाह के बाद वह २४ साल ६ मास जीवित रहीं।

बीबी ख़दीजा और चचा अबूतालिब जब तक जीवित रहे। प्रत्येक संकट में उन्हों ने प्यारे रसूल

को ढारस देतीं दीन के प्रचार में अपनी बुद्धि के अनुसार राय देतीं। जी जान से अल्लाह का हुक्म बजा लाने और उसकी मरज़ी दूसरों को बताने में आप के साथ थीं।

इन दोनों के देहान्त के बाद तो आप पर विपत्तियों की वर्षा आरम्भ हो गई। नौबत यहाँ तक पहुंची कि आप नमाज़ पढ़ते तो दुष्ट आप के सिर पर मिट्टी डाल देते, या जानवर की ओझ। और इस प्रकार अपने लिए दोज़ख़ की आग का प्रबन्ध करते, और मूर्ख ऐसे कि इन हरकतों पर प्रसन्न होते।

ताइफ़ में : अल्लाह का संदेश आप को पहुंचाना ही था। भटके हुओं को राह पर लाने और इन्सानों का जीवन सँवारने के लिए भेजे ही गये थे। अब मक्के की एक एक वस्तु आप की शत्रु हो रही थी। आप को अपने प्राण की चिन्ता न थी। उस की रक्षा करने वाला तो अल्लाह था। विपत्तियों तथा संकटों से आप डरने वाले न थे। आप को इस बात की चिन्ता थी कि कुछ लोग साथ देने वाले मिल जायें तो मैं अपना कार्य करूं। लोगों तक अल्लाह का संदेश पहुंचाऊं। बात कहने की सुविधा हो। बुरा भला

कहने और परीशान करने से काफ़िरों को कोई रोक सकें, तो यह लोग देखें और समझें और सीधा रास्ता इन को दिखाई दे।

मक्के के दक्षिण पूर्व कोई पचास मील दूरी पर एक नगर है। उस का नाम 'ताइफ़' है। गर्मियों के समय लोग यहाँ सैर को जाया करते थे। जैसे हमारे यहां नैनीताल और मसूरी जाते हैं। बड़ा हरा भरा स्थान है। धनवानों की बस्ती थी। प्यारे रसूल ने सोचा, वहां जाऊं, कोई भला आदमी मेरी बात सुन ले और साथ देने पर तय्यार होजाए, तो अल्लाह का सन्देश पहुंचाने में सुविधा होगी। ताइफ़ को केंद्र बनाकर कार्य जारी रखा जाएगा। आप वहां गये। उन्हों ने आप की बात पर कान धरने के बदले आप का ठट्ठा उड़ाया। बुरे बच्चों और दुष्ट लोगों को आपके पीछे लगा दिया। उन पापियों ने आप को बहुत सताया। एक दीवार से टेक लगा कर खड़े होगए। यह दो आदमियों के घर की दीवार थी। जो वास्तव में मक्के के रहने वाले थे। वे काफ़िर थे। आप की बात न मानते थे। लेकिन आप की नेकी का सिक्का उनके हृदय पर जमा हुआ था। उन्हों ने

पापियों के उस गिरोह से आप का पीछा छुड़ाया।

फिर मक्का वापिस आए | ताइफ़ के लोगों का यह व्वहार देखा तो आप फिर मक्का लौट आए। परन्तु अब वहां काफ़िरों की बन आई थी। चचा अबूतालिब और बीबी ख़दीजा इस संसार से जाचुके थे। कौन था जो आप का साथ देता। शत्रुओं के मुक़ाबिले में कौन आप को बचाने के लिए सब कुछ सहता। किन्तु आप ने साहस न छोड़ा। अल्लाह का संदेश तो प्रत्येक अवस्था में पहुंचाना ही था। दो चार आदमियों के पास आप ने कहला भेजा "यदि आप मक्का आएं तो वे आप को पनाह दें, ताकि आप अपने रब का संदेश लोगों तक पहुंचायें। किन्तु बुरे लोगों में भी कुछ ऐसे होते हैं कि नेकी का भाव उन के हृदय में राख के ढेर में चिंगारी की भांति दबा रहता है। बुराइयों में घिरे रहे चिंगारी बुझ गई। अच्छाई की हवा लग गई, चिंगारी भड़क उठी।

मुतइम बिन अदी की पनाह में | आप का संदेश 'मुतइम बिन अदी' के पास पहुंचाया। उस ने कहा मैं पनाह देने को तय्यार हूँ और कवच पहन

कर बाहर आये। हाथ में खड़ग थी। घर के अन्य लोग भी साथ थे। सब हथियार-बन्द थे। इन लोगों के साथ प्यारे रसूल ने मक्के में प्रवेश किया। अबुजहल बहुत क्रोधित हुआ। बिगड़ कर 'मुतइम' से पूछने लगा-"मुसलमान होगये हो अथवा इनको केवल पनाह दी है।" 'मुतइम ने कहा "अरबों की रीति के अनुसार वह मेरी पनाह में हैं।" यह वही 'मुतइम बिन अदी' था जिसने बाइकाट के विरोध में आवाज़ उठाई थी।

प्यारे रसूल ने अपना कार्य जारी रखा। जो मिलता उस से फ़रमाते-"इबादत के लाइक़ केवल अल्लाह है। उस का कोई साझी नहीं। यह मूर्तियां इस योग्य नहीं कि मनुष्य का माथा इन के आगे झुके। मैं अल्लाह का बन्दा और उस का रसूल हूं।"

'अनसार' मुसलमान होते हैं। हज का दिन आता तो मक्के में बड़ी चहल-पहल और हमा-हमी होजाती। समस्त अरब का मेला सा लग जाता। दूर दूर से लोग आते। नाना प्रकार के खेल, तमाशे, सभायें तथा जलसे होते। प्रत्येक क़बीले का अलग अलग जमाव होता। लोग एक दूसरे से

मिलते, बातें करते। बाज़ियाँ लगाते, दिल बहलाव का सामान होता, हज के बाद भी मक्के के आस पास के स्थानों पर जो क़ाफ़िलों की राह में पड़ते, कई मेले लगते थे।

इस अवसर पर आप का कार्य बढ़ जाता था। आप प्रत्येक गिरोह के पास जाते, प्रत्येक क़बीले के लोगों से मिलते। अपनी बात कहते। सच्ची बात सब के कानों तक पहुंचाते। रसूल थे। अपना कर्त्तव्य पूरा करते। अल्लाह की बड़ाई बयान करते। वैसे भी जो बाहर से आता मक्के में उस को एक ही नई बात मालूम होती। बनी हाशिम में एक नव युवक है। वह कहता है-"मैं अल्लाह का बन्दा हूँ। उस का रसूल हूँ। अल्लाह एक है। उस का कोई साझी नहीं। मूर्ति-पूजा छोड़ दो। यह कोई बात नहीं कि बाप दादा बुरी राह पर चलते रहे हों तो तुम भी उसी राह पर चलते रहो। मरने के बाद पूछ गछ होगी। जो भलाई करेगा इनाम पायेगा, जो बुराई करेगा दोज़ख़ की आग में जलेगा। 'अबुजहल' और 'अबुलहब' कहते फिरते-"देखो, यारो, तुम से एक व्यक्ति की भेंट होगी। तुम्हारे

पास अवश्य आयेगा। मूर्तियों को बुरा कहता है। बाप दादा जिस धर्म पर चलते आये हैं उस को मिटाना चाहता है। नया दीन फैलाने की धुन में है। कवि या फिर पागल है। (तोबा तोबा) तुम उस की बात पर ध्यान न देना। इन बातों का उलटा असर होता। लोगों को चिन्ता होजाती कि देखें कौन व्यक्ति है। क्या कहता है। सच्चाई का यही हाल है। दोस्त तो ख़ैर अपना हक़ अदा ही करते हैं। दुशमन हानि पहुंचाना चाहते हैं, उलटा उस से लाभ पहुंचता है। सदा से ऐसा ही होता रहा है। सदा ऐसा ही होता रहेगा। सत्य का स्वभाव एक है, एक ही रहेगा।

प्यारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का

नगर, 'यसरिब' जिस को अब हम मदीना कहते हैं। प्यारे रसूल यहां गये तब से उस को 'मदीनतुन्नबी' (प्यारे नबी का नगर) कहा जाने लगा। फिर केवल 'मदीना' रहगया। अब हम केवल 'मदीना' कहते हैं। मदीने में उस समय अरबों के दो क़बीले आबाद थे। एक का नाम था 'औस' दूसरे का 'ख़ज़रज'। इस नगर में यहूदी भी आबाद थे। जैसा

कि अरब के अन्य क़बीलों का हाल था, यह दोनों क़बीले भी आपस में लड़ा करते। अभी कुछ ही दिन हुये थे कि इन दोनों में बड़ी लड़ाई हुई थी। और दोनों ओर के बहुत से आदमी मारे गये थे। यह लोग मुसलमान हुये उन्हों ने अल्लाह का दीन फैलाने में जी जान से सहायता की। इस लिए उन को अनसार कहा जाने लगा। हम उनका वर्णन इसी नाम से करेंगे।

हज के अवसर पर सारे अरब से लोग आया करते थे। मदीने से भी आते थे। आप उन के पास भी गये। अल्लाह ने उन को मार्ग दिखलाया। कुछ लोग मुसलमान होगये। मदीने में यहूदी आबाद थे। उन के धार्मिक ग्रन्थ में एक आने वाले नबी का वर्णन था, यह बात उन लोगों के कान में पड़ चुकी थी। इस बार अनसार में से मुसलमान होने वालों की संख्या ६ थी।

दूसरे साल अर्थात् नबुव्वत के बारहवें साल सन् ६२१ ई० में अनसार में से बारह आदमी आये। मुसलमान हुये। प्रतिज्ञा की:-"किसी को ख़ुदा का साझी न बनायेंगे। चोरी तथा कुकर्म नहीं करेंगे।

अपनी संतान की हत्या से बचेंगे। किसी पर झूठा अपराध नहीं लगायेंगे। प्यारे रसूल की किसी भलाई में अवज्ञा न करेंगे।"

<u>मुसअब बिन उमैर</u>। आप ने मुसअब बिन उमैर को क़ुरआन की शिक्षा देने के लिये उन के साथ भेजा। उन को सब लोग वहाँ पढ़ाने वाला कहते थे। वह लोगों को क़ुरआन पढ़ाते। दीन की बातें सिखाते। अल्लाह के बताए हुये ढङ्ग पर स्वयं चलते। लोग उन को देख कर अच्छी बातें सीखते, वैसा ही करते। मुसब बिन उमैर की बातें सुन कर 'साद बिन मुआज़' मुसलमान हुये। उन की गणना मदीने के बड़े लोगों में थी। उन के मुसलमान होते ही मदीने के घर घर में दीन फैल गया। न कोई पुरुष बचा न स्त्री, युवक, वृद्ध, बालक सब मुसलमान होगये। दीन फैलने में 'असअद बिन ज़ुरार' नामक अनसारी ने बड़ा भाग लिया। उन की चेष्ठा से प्रत्येक घर में प्रकाश पहुंचा। सब ने सीधा मार्ग पाया।

<u>अनसार से प्रतिज्ञा</u>। दूसरे साल हज के अवसर पर मुसलमान मदीने से मक्के आये। उन के साथ वे लोग भी थे जो अभी मुसलमान नहीं हुये थे। मुसलमानों

ने आप से कहला भेजा कि हम एकान्त में आप से भेंट करना चाहते हैं। कुछ बातें करनी हैं। इस भेंट के लिये वह स्थान तै हुआ जिस को 'अक़बा' कहते थे। ईदुल-अज़हा (बक़र-ईद) के दूसरे दिन रात के सन्नाटे में, एक तिहाई पहर बीतने के बाद दबे पाँव अनसार का गिरोह घाटी में इकट्ठा हुआ। पुरुष तथा स्त्री सभी थे। प्यारे रसूल की राह देखी जाने लगी। प्रतिज्ञा के अनुसार आप पधारे। आप के साथ आप के चचा, अबदुल मुत्तलिब के बेटे अब्बास, भी थे। वह अभी तक मुसलमान नहीं हुए थे। फिर भी इस लिये आये थे कि अनसार से जो बात चीत होती है वह भरोसे के योग्य है अथवा नहीं। उनही ने सब से पहले बात चीत आरम्भ की। बोलेः—"ऐ 'ख़ज़रज' के लोगों, तुम्हें मालूम है मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) हमारे कौन हैं। हम उन लोगों के विरुद्ध इन की सहायता के लिये सब कुछ सहते रहे हैं, जो हमारी ही जाति के लोग हैं। और धर्म के मामले में हमारी उन की राय भी एक है। हम ने इनके लिये मुसलमान न होने पर भी, न अपनी जाति की परवाह की, न अपने धर्म की। हमारे नगर में यह

प्रतिष्ठित जीवन बिता रहे हैं। सुरक्षित हैं। फिर भी यह अब तुम्हारे नगर जाना चाहते हैं। तुम में सम्मिलित होने पर इन को आग्रह हैं। मेरा कहना यह है कि यदि तुम अपना प्रण पूरा करने का दृढ़ संकल्प रखते हो, शत्रुओं के विरुद्ध इन की सहायता का साहस तुम में है, तो इन को लेजाओ। और यदि यह विचार हो कि यह जब हमें छोड़ कर, अपना नगर और अपनी मातृभूमि का परित्याग करके, तुम्हारे यहां पहुंचें तो तुम क़ुरैश के दबाव में आकर इन्हें शत्रुओं को समर्पण करदो, तो इस से उत्तम यह है कि तुम अभी से स्पष्ट उत्तर देदो। यह हमारे बीच हर प्रकार शान्ति में हैं, आदर तथा सम्मान से हैं।"

मदीने के लोगों ने आप की ओर देखा। एक ने कहा-"ऐ रसूलुल्लाह, हम तो आप के मुख से सुनना चाहते हैं कि आप को हम से क्या प्रण लेने की इच्छा है। आप ने अपने सिद्धान्त् के अनुसार क़ुरआन पाक की कुछ 'आयतें' पढ़ीं। अल्लाह की इबादत तथा उसके आज्ञा-पालन पर उभारा, फिर बोले-"मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे अपने बाल-बच्चों

तथा घर वालों की भाँति प्रिय समझो, जो उन के लिये करते हो मेरे लिये करो, जितनी रक्षा उन की आवश्यक समझते हो उतनी मेरी आवश्यक समझो। अनसार ने कहा-"हम इस का प्रण करते हैं। आप को ज्ञात है कि हम को लड़ने मरने में संकोच नहीं। फिर आप के लिये शत्रुओं से युद्ध करना, 'दीन' के मार्ग में सर धड़ की बाज़ी लगाना हमारा करत्तव्य है। हम पीछे न रहेंगे।" एक ने कहा-"ए अल्लाह के रसूल, एक बात का हम और संतोष करना चाहते हैं। अब तक यहूदियों से हमारा सम्बन्ध था, आप के लिये हम उन से कट रहे हैं। कल अल्लाह अपने दीन को विजयी कर दे और आप हम को छोड़ कर अपने परिवार वालों से आमिलें।" आप ने उत्तर दिया मैं तुम्हारा हूं। तुम मेरे हो। जिस से तुम्हारा युद्ध उस से मेरा युद्ध, जिस से तुम्हारी सन्धि उस से मेरी सन्धि। फिर आप ने उन में से बारह व्यक्तियों को चुन लिया, और उन के सिर यह कार्य लगाया कि अपने 'क़बीले' के लोगों को दीन की बातें बतलाएं, अल्लाह की आज्ञा के अनुकूल चलना सिखायें। यह मानो

हमारे इतिहास में इसलामी जमाअत के बारह 'क़य्यिम' थे। जिन्हों ने अल्लाह और उस के रसूल के आदेशानुसार कर्म करना लोगों को सिखाया। प्रथम 'क़य्यिम' ो हज़रत 'मुसअब बिन उमैर' थे जिन के सिर सर्व-प्रथम प्यारे रसूल ने यह कार्य लगाया था। इन का हाल पहले बताया जा चुका है।

तत्-पश्चात् आप ने उन लोगों को अनुमनि दी कि अपने डेरे पर वापिस जायें और विश्राम करें।

क़ुरैश को रात की घटना की कुछ सुन गुन मिल गई थी। उन में खलबली मच गई। 'अनसार' के डेरे पर पहुंचे, पूछ गछ की, लड़ाई की धमकी दी कुछ पता न चला लौट आये। जब अनसार वहाँ से मदीने चले तो ठीक ठीक बात का पता चला। अब क्या करते।

इसके बाद आप ने मुसलमानों की खुली अनुमति देदी कि मदीने चले जायें। अनसार से इन का सम्बन्ध भाइयों का सम्बन्ध है। यह संबन्ध दीन का संबन्ध है। और यही वास्तविक संबन्ध है। सब मुसलमान भाई भाई हैं। बहुत से मुसलमान चले गये। कुछ विवश और असहाय थे जिन को

काफ़िरों ने जाने न दिया, रह गये।

रात के सन्नाटे में 'अनसार' से जिस प्रतिज्ञा का वर्णन हम ने ऊपर किया, उस का हमारे इतिहास में, संसार के इतिहास में बड़ा महत्व है। प्यारे रसूल ने मक्के के बदले मदीने में रहना निश्चित् किया। दीन के लिये कार्य का केंद्र बदल गया। काफ़िर मुसलमानों को सताते थे। उन को एक शान्ति का स्थान मिल गया। दीन का कार्य करने वाला एक नया गिरोह पैदा होगया। दीन के विरुद्ध झगड़ने वाले एक नये गिरोह 'यहूदियों' से पाला पड़ा। आगे चलकर दीन के प्रचार में इस गरोह ने बड़ी कठिनाइयाँ उत्पन्न कीं। फिर भी सच्ची बात यह है कि काम आगे बढ़ता रहा। अब प्रकाश बहुत दूर दूर पहुंच रहा था।

फूंको से यह चिराग़ बुझाया न जायेगा

इन सब बातों ने क़ुरैश की नींद हराम करदी। उन्हों ने समझ लिया। अब मुसलमान विवशों तथा असहायों का एक गरोह नहीं, बल्कि अरब में एक स्वतन्त्र शक्ति बनते जा रहे हैं। और एक दिन आयेगा जब यह हम से मैदान लेंगे। इस लिये वे

'दारुन्नदवा' में जमा हुये। 'दारुन्नदवा' उन का क्लब घर था। वहीं एकत्र होते। कोई विशेष बात होती तो आपस में सलाह करते। इस कल्ब घर में जितनी बुरी सलाह हुई कदाचित् संसार की किसी भी दूसरी सभा में हुई हो। सोचने लगे कि क्या किया जाये। अब तो यह दरिया की भांति बढ़ते जा रहे हैं। एक दिन था कि इन की सुनने वाला कोई न था। सफ़ा पहाड़ की चोटी से पहली बार जब इस नये दीन की पुकार हमारे कान में पहुंची थी, तो हम समझे थे कि यह आवाज़ पहाड़ियों से टकरा कर रह जायेगी। और इस की गूंज पहाड़ों तथा तराइयों में गुम हो जायेगी। किन्तु आज हम देखते हैं कि यह सदा दिलों में उतरती जारही है। हमें आज ही इस का निर्णय करना है कि इस सदा को कैसे बन्द किया जाये। यह पुकार किस प्रकार मन्द पड़े (तौबा, तौबा)। उन के सिर पर एक बौखलाहट सवार थी एक ने कहा-हम उन्हें बन्दी करदें। एक व्यक्ति हर समय पहरा देता रहे। फिर यह क्या करेंगे। एक बूढ़ा बोलाः-"मसखरो, अब तो उनके बहुत से साथी होगये हैं। फिर उनके परिवार वाले भी तो हैं। आयेंगे, तुम्हारी कोठरी के किवाड़ तोड़

डालेंगे। उन को निकाल ले जायेंगे। तुम मुंह देखते रह जाओगे। दूसरा बोलाः-"तो फिर हम उन को देश-निकाला देदेंगे। उन का दीन फैले या कुछ भी हो, हमारे यहाँ से तो झंझट समाप्त होगा।" बूढ़े ने कहा-"तुम लोग बड़े मूर्ख हो। तुम को मालूम है कि उन की बातों में जादू का असर है। उन का दीन जङ्गल की अग्नि की भांति फैलता जा रहा है। तुम उन्हें देश निकाला दोगे और वह समस्त अरब को अपना सहमत बनाकर फिर इस नगर में प्रवेश करेंगे। वह समय हम सब के लिये बहुत बुरा होगा।" अब अबूजहल की बारी थी। वह दुष्ट प्यारे नबी को सताने और इसलाम के विरोध में सदा आगे आगे रहा करता था। उसने कहा "मैं ऐसा उपाय बताऊं जो कभी निष्फल न हो। प्रत्येक क़बीले से एक एक नवयुवक नङ्गी तलवार हाथ में ले। सब एकत्र होकर उन पर आक्रमण करें। और (तोबा तोबा) उन को वद्य कर डालें। फिर उन के परिवार वालों का क्या साहस होगा कि बदला ले सकें। किस किस से लड़ाई मोल ले सकेंगे। सब इस राय से सहमत होगये एक दिन निश्चित होगया। इस दूषित संकल्प के साथ उन की

सभा विसर्जित हुई।
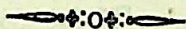
हिजरत

आप को क़ुरैष के इस षड़यन्त्र का हाल मिला। हिजरत के लिये अल्लाह का आदेश आचुका था। आप हज़रत अबुबक्र सिद्दीक़ के पास गये। उन को बतलाया कि मक्का छोड़ने की अनुमति मिल चुकी है। उन्हों ने भी साथ चलने की इच्छा प्रगट की। आप ने उन को अनुमति देदी। यह निश्चित हुआ कि जिस रात को क़ुरैश के नव युवकों ने अपने दुषित संकल्प को कार्यान्वित करना निश्चय किया है, उसी रात को यात्रा आरम्भ की जाये।

सच्चे दीन का चिराग़ बुझाने की घृणित लालसा हृदय में लिये, काफ़िर अवसर की ताक में दबके खड़े थे। प्यारे रसूल ने हज़रत अली को आदेश दिया कि आप के बिस्तर पर आप की चादर ओढ़ कर सो

रहें। सवेरे उठ कर लोगों की धरोहरें वापिस करके तब मदीने आये। मक्के के काफ़िर आप के शत्रु थे, किन्तु आप की ईमानदारी पर इतना भरोसा था कि जिन वस्तुओं को अपने पास रखते डरते थे, उन को आप के पास निश्चिन्त होकर रख जाते थे। और ज्यों की त्यों वापिस पाते थे। आप को पसंद न था कि उन लोगों की वस्तुयें भी नष्ट हों, या उनको ठीक से वापिस न मिलें जो आप के ख़ून के प्यासे थे। आपने लोगों को बतलाया कि धरोहर को इधर-उधर करना बड़ा पाप है।

घर से निकले और सीधे हज़रत अबूबक्र (रज़ि-यल्लाहु अनहु) के पास आए। थोड़ा सा यात्रिक साथ लिया गया। हज़रत अबूबक्र ने एक ऊँटनी यात्रा के लिये देनी चाही। आप ने कहा मूल्य ले लो। मुफ्त न लूँगा। वह बाध्य होकर मान गये। वहां से चल कर सौर पहाड़ की एक कन्दरा में पहुंचे। उस कन्दरा में तीन दिन रहे। हज़रत अबूबक्र के पुत्र अबदुल्लाह दिन भर काफ़िरों की बातें सुनते और संध्या के समय आकर आप लोगों को हाल देते कि आप की खोज तथा गिरफ़तारी की यह तय्यारियाँ हो रही हैं।

हुआ यह था कि रात भर काफ़िर नवयुवक आप के घर का पहरा देते रहे। सवेरे क्या देखते हैं कि प्यारे रसूल के बिस्तर से उन के बदले हज़रत अली उठ रहे हैं। बहुत खिसयाए। यह क्या? हम सब को बड़ा धोका हुआ। लोग ढूंढने निकल पड़े। सौ ऊँट पारितोषिक निश्चित हुआ। बड़ी खलबली मच गई, जो सोचा था कुछ न होसका। आमिर बिन फ़ुहैरा, हज़रत अबुबक्र के ग़ुलाम थे। दिन भर बकरियाँ चराते। सायं को ऊन्हें कन्दरा के मुंह पर ले आते। दूध दुह कर आप दोनों को देते। बकरियों के आने जाने से हज़रत अबदुल्लाह के पद-चिन्ह मिट जाते। किसी को पता न चलता कि यहां तक बकरियों और चरवाहों के अतिरिक्त कोई आया था।

तीन दिन के बाद कन्दरा से निकले। दो ऊंटनियाँ वर्तमान थीं। उन पर सवार हुए। "अबदुल्लाह बिन उरैक़ित" नामक एक व्यक्ति जो मार्ग से भली भाँति जानकार था, आगे आगे था। आमिर बिन फ़ुहैरा को हज़रत अबुबक्र ने अपने पीछे बिठलाया। रास्ते में सहायता मिलेगी। कन्दरा में तीन दिन ठहरे रहे। इस अवसर पर हज़रत अबुबक्र

की बड़ी कन्या 'असमा' भी आप लोगों के लिए नाश्ता आदि जुटाने और तय्यार करने में बड़े अनुराग से भाग लेती थीं। अल्लाह की राह में हिजरत के लिये सब लोग जिन को दीन प्रिय था, या जो नेकी भलाई से प्रेम रखते थे, जी जान से अपना कर्त्तव्य पालन कर रहे थे।

प्यारे रसूल पहली रबीउल अव्वल को मक्के से निकले। चलते समय आप ने प्रार्थना की-"ऐ अल्लाह इन लोगों ने मुझे उस नगर से निकाला जो मुझे समस्त नगरों से अधिक प्रिय था। तू अब मुझे उस नगर में बसा, जो तुझे समस्त नगरों से अधिक प्यारा हो।"

आप रबीउल अव्वल को सोमवार के दिन 'ज़ुहर' के समय मदीने पहुंचे। उस समय आप की आयु ५२ साल थी। अंग्रेज़ी तारीख़ २८ जून सन् ६२२ ई० थी। नबी होने के बाद आप मक्के में आये, १३ साल रहे।

दीन का संदेश मक्के से मदीने पहुंचा। प्रचार का केन्द्र बदल गया। किन्तु दीन का केन्द्र मक्का ही रहा, और सदा रहेगा। मदीने से सच्चे दीन का

प्रकाश अरब ही नहीं, संसार के दूर दूर भागों में पहुंचा। सैकड़ों जातियों और बहुत से देशों पर इसलाम का प्रभाव हुआ। बड़ी बड़ी बातें हुईं। तुम को यह सब हाल मालूम होगा।

वह पुकार जो सफ़ा पहाड़ से उठी थी, जिसको काफ़िर समझते थे कि पहाड़ों से टकरा कर रह जाएगी, समस्त संसार में उस की गूंज सुनाई देने लगी। मदीने पहुंच कर इसलाम एक शक्ति, एक नित्य आन्दोलन एवं अल्लाह का अन्तिम तथा पूर्ण दीन बना।

आप के मक्के से मदीने जाने की तारीख़ से इसलामी सन् का हिसाब आरम्भ हुआ। इसको हिजरी सन् कहते हैं। आजकल सन् १३७३ हि० है। अर्थात आप के मक्के से मदीने जाने के बाद इतने साल बीत चुके हैं। इसलामी महीनों की भाँति इसलामी सन् भी भिन्न है। वह यही हिजरी सन् है। हम को अपने पत्र-व्यवहार आदि में इसलामी महीना और यही सन् लिखना चाहिए।

हिजरत और उसके बाद

हिजरत और उसके बाद

हम जहां जन्म लेते हैं, पलते बढ़ते हैं, उस स्थान से स्वभावतः हम को बड़ा लगाव होता है। मक्के की तलेटियाँ, जिन में आप ने बकरियां चराई थीं; संसार में अल्लाह का सर्व-प्रथम घर, काबा, जिस की दीवारों की मरम्मत के लिये बहुत छोटी आयु में आपने अपने बड़े बूढ़ों के साथ पत्थर ढोए; सफ़ा पहाड़, जिस पर खड़े होकर आपने पहली बार अपनी जाति को सत्य और सदाचार की ओर बुलाया; वह गलियां, जिन में आप शाम सवेरे इस धुन में फिरा करते थे कि अपने देश-वासियों को अधर्म के अंधकार से निकाल कर ज्ञान तथा धर्म के प्रकाश में ले आयें; स्नेह-युक्त तथा दया-शील दादा, प्रिय चाचा एवं पतिव्रता धर्मपत्नी, सब ही तो इस भूमि में दफ़न थे। बाल्य-काल, युवावस्था और नबी होने के पश्चात्, शेबे अबीतालिब में बीते हुए दिन, सत्य के लिये झेला हुआ एक एक कष्ट; दुख और

सुख सब ही याद आया। उस नगर की ओर हृदय खिंचा जाता था। किन्तु पग आगे ही को बढ़ रहे थे। अपने कर्तव्य-पालन की लगन, अल्लाह का दीन फैलाने की आकांक्षा, यह आशा कि मदीने में कुछ साथी गए हैं, जो इस कार्य को आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध होंगे। अल्लाह के आज्ञापालन की इच्छा प्रत्येक वस्तु से बढ़ गई।

क़ुबा में | सोमवार, ८ रबीउल अव्वल (२० सितम्बर सन् ६२२ ई०) को आप क़ुबा पहुंचे, सोमवार से शुक्र तक चार दिन आप वहाँ ठहरे। एक मस्जिद की नीव रखी। अल्लाह पाक ने क़ुरआन में इस मस्जिद का वर्णन किया है, और बताया है कि इसकी नीव सदाचार तथा संयम के भाव पर रखी गई थी। प्रत्येक मुसलमान के हृदय में कम से कम एक बार उसमें नमाज़ पढ़ने की अभिलाषा होनी चाहिये।

वहाँ से आगे बढ़े। मार्ग में एक तराई थी, क़ुबा तथा मदीने के ठीक बीचों बीच, यहां जुमा की नमाज़ पढ़ी। जुमा की यह पहली नमाज़ थी। इसमें सौ आदमी सम्मिलित हुये। नमाज़ से पूर्व आपने

ख़तबा दिया। जीवन में सदाचार ग्रहण करने का उपदेश दिया। आख़िरत के उत्तर-दायित्व से डराया। अल्लाह का आज्ञापालन करने, स्वयं अच्छे बनने तथा दूसरों को अच्छा बनाने पर उभारा।

मदीने में चौथे दिन आगे बढ़े। मदीने के स्त्री, पुरुष, वृद्ध, बालक सब ही आप की बाट जोह रहे थे। आँखें मार्ग पर लगी हुई थीं। आप को देखकर प्रसन्नता से लोगों के चिहरे चमक उठे। पूरी बस्ती में हर्ष की लहर दौड़ गई। लोग आप के स्वागत में सब के मुंह पर यह पद्य थे।

पूर्णिमा का चांद निकला।
इन 'विदा' की घाटियों से॥
धन्य है जगदीश तुम को।
भाग्य जागे हैं हमारे॥
हम तुमहारी इस कृपा पर।
हैं भरे कृतज्ञता से॥
स्वागतम, दासों में अपने।
आ गए ईश्वर के प्यारे॥

मक्के से आप बृहस्पति-वार पहली रबीउल अव्वल को चले, सोमवार, १२ रबीउल अव्वल को दिन

में मदीने पहुंचे। (२४ सितम्बर सन् ६२२ ई०) आप की आयु उस समय लगभग ५३ साल थी।

अनसार का हाल आप के आने से पूर्व

मदीने का पुराना नाम यसरिब है। यहाँ अरबों के दो क़बीले रहते थे एक का नाम था 'औस' दूसरे का 'ख़ज़रज'। उन में सदा लड़ाई ठनी रहती थी। बहुत छोटी छोटी बातों पर ख़ून की नदियाँ बह जाती थीं। अनसार ही नहीं, इस्लाम से पूर्व सब ही अरबों का यही हाल था। किसीने अपने बाप दादा की प्रशंसा को करदी, दूसरा झगड़ पड़ा। किसी का घोड़ा दूसरे के घोड़े से आगे निकल गया, लड़ाई छिड़ गई। किसी की ऊँटनी दूसरे के खेत में पड़गई, तलवारें म्यान से बाहर निकल आईं। यह दोनों क़बीले भी बहुत दिनों से लड़ते चले आरहे थे, उन में बहुत बड़ी लड़ाई हो चुकी थी। झूठी बड़ाई के लिये कितनी स्त्रियां विधवा हुईं, कितने बालक यतीम हुये।

मदीने पहुंचे तो आपने उन लोगों को समझाया- "यह क़बीला वबीला कुछ नहीं। तुम सब आपस में भाई भाई हो। सब मिल कर अल्लाह के दीन की

सहायता करने वाले हो। दीन फैलाने में। अपनी और समस्त संसार की सुधा में मेरा साथ देने वाले हो। अब सब झगड़े समाप्त। अब तुम सब मिलकर एक गिरोह 'अनसार' हो।

इस प्रकार अल्लाह के दीन ने इन को सदा के लिये जोड़ दिया।

पड़ोसी जातियों से सन्धि। हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) का नाम तुम ने सुना ही है। उन पर तौरात उतारी गई थी। तौरात अल्लाह की किताब थी। यहूदियों ने अपनी दुष्टता से उस में अदल बदल कर दिया था। यहूदी हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) की उम्मत में थे। मदीने में उनका भी निवास था। सदा से महाजनी का व्यवसाय करते थे। उस समय भी उन का वही उद्यम था। अनसार खेती बाड़ी करते, ऋण आदि की आवश्यकता होती तो यहूदियों के पास जाते। यह लोग विना व्याज के ऋण न देते। मानवता नाममात्र भी न थी। व्याज तो उपद्रव की जड़ है ही। नित्नए झगड़े बखेड़े होते रहते।

आप ने यहूदियों और आस पास के अरब क़बीलों से एक सन्धि की। सारी शर्तें लिख ली

गई। शर्तें यह थीं:-

(१) यहूदी अपने धर्म पर रहेंगे, मुसलमान अपने दीन पर।

(२) सन्धि में जो लोग सम्मिलित हैं उन में से किसी पर अन्याय होगा तो अन्य लोग उस की सहायता करेंगे।

(३) अत्याचार और अनर्थ में साथ नहीं दिया जायेगा चाहे किसी की ओर से हो।

(४) आजीविका सम्मिलित न होगी। यहूदी अपने ढंग से व्यवसाय करेंगे, मुसलमान अपने सिद्धान्त के अनुसार रोज़ी कमायेंगे।

(५) किसी भी मतभेद के बढ़ने पर अन्तिम निर्णय अल्लाह और उसके रसूल का होगा, उस को सब मानेंगे।

(६) मक्के के मुशरिकों तथा उनके पक्षपातियों को शरण नहीं दी जायेगी। मदीने पर आक्रमण हो तो यहूदी मुसलमानों के साथ युद्ध करेंगे।

(७) सन्धि में यहूदियों को भी सम्मिलित रखा जायेगा।

आप चाहते थे पड़ोसियों के साथ झगड़े बखेड़े

समाप्त होजायें। मुसलमान अल्लाह के दीन पर चलें। पड़ोसी भी अच्छी बातें सीखें। मदीने पर आक्रमण हो तो बचाव भली भाँति हो सके।

'मुवाख़ात' या भाईचारा। आप की हिजरत से पूर्व मुसलमान मदीने आने लगे थे। आप के आने के बाद तो उनका ताँता बंध गया। घर बार छुटता, जीवन भर की गृहस्थी तथा गाढ़े पसीने की कमाई भी छिन जाती। किन्तु इन अल्लाह के बन्दों को ईमान इतना प्यारा था कि उसके आगे प्रत्येक वस्तु तुच्छ देख पड़ती न कुटुम्बियों तथा सम्बन्धियों की चिन्ता न घर बार और मातृभूमि की। अल्लाह के आदेश पर चलने और उसी के अनुसार समस्त जीवन को ढालने का संकल्प उन्हें खींचे लिये जारहा था। यह न धन के लिए मदीने जारहे थे, न प्रतिष्ठा तथा ख्याति के लिये। उन को तो बस दीन के प्रचार की धुन लिये जारही थी।

ऐसे भी थे जो मुशरिकों के पंजे में फंसे हुये थे। हिजरत नहीं कर सकते थे। उन का दोष केवल यह था कि वे उस सच्चाई की गवाही देते थे। जिस पर पृथ्वी, आकाश तथा इस ब्रह्मण्ड का एक एक

कण साची है। हर घड़ी उनके हृदय से यह सदा उठती-"हे मालिक, हमें इस बस्ती से निकाल। यहाँ के लोग बड़े कठोर तथा निंदयी हैं।"

मदीने में पाँच मास रहने के बाद आप ने 'अनसार' और 'मुहाजिरीन' का भाईचारा करादिया। आप ऐक एक मुहाजिर और अनसारी का हाथ पकड़ते और मिलाते, साथ ही कहते जाते-":तुम दोनों भाई हो। सब मुसलमान भाई भाई हैं।" इस 'भाई बनने को हमारे इतिहास में 'मुवाख़त' कहते हैं।"

इस प्रकार जिन लोगों में 'भाईचारा' कराया गया उनकी संख्या सौ थी। आधे मुहाजिर और आधे अनसार। अनसारों ने अपने इन दीनी भाइयों को, जिन से किसी प्रकार का सांसारिक नाता नहीं था, अपने घर, बाग, जायदाद सब में बराबर का साझी बना लिया।

'बद्र' का युद्ध। हिजरत के बाद ही क़ुरैश ने मदीने पर अक्रमण की तय्यारी आरम्भ करदी थी। इसके लिये ख़र्च का प्रबन्ध आवश्यक था। इस का यह उपाय सोचा गया कि व्यापार के लिये एक

क़ाफ़िला 'शाम' भेजा जाये। इस में मक्के के सब लोग पूंजी लगायें और जो कुछ लाभ हो सब मुसलमान से युद्ध में लगाया जाये। यह क़ाफ़िला जब शाम से वापिस लौट रहा था तो यह झूठी अफ़वाह मक्के में फैल गई कि मुसलमान क़ाफ़िले को लूटने आरहे हैं। इस पर क़ुरैश बहुत घबराये, अत्यन्त क्रोधित हुये। बड़ी भारी सेना लेकर निकले। प्रायः एक हज़ार की संख्या थी। जो स्वयं न जा सका उसने अपने बदले का आदमी भेजा। सात सौ पैदल और सवार, कवच से लैस, लोहे में डूबे हुये, सौ घोड़े और सात सौ ऊँट, ऐसा जान पड़ता था कि भूकम्प आगया है।

कुफ़्र का समुद्र ठाठें मारता हुआ आगे बढ़ा

आँधी और तूफ़ान की भाँति बढ़ते चले जारहे थे। दासियाँ तथा गाने वालियां भी साथ थीं। गाने क्या थे। काफ़िरों की प्रशंसा, घमन्ड और अभिमान की बातें, अल्लाह के दीन और मुसलमानों की निन्दा। अभी मार्ग ही में थे कि हाल मिला—'क़ाफ़िला बच कर निकल गया। आक्रमण नहीं हुआ, वापिस चलो।' किन्तु अबूजहल पक्का दुष्ट था। वह कब

मानता। सिर में सौदा समाया था। मृत्यु सिर पर नाच रही थी। बोला अब हम न लौटेंगे। बद्र के मैदान में डेरे डाल, उत्सव मनायेंगे। गाना बजाना होगा। भोज रहेगा। समस्त अरब पर हमारी धाक बैठ जायेगी। मुसलमानों का क्या साहस जो हम पर आक्रमण करें। हम तो उनके सिर पर पहुंच गये हैं। फिर भी कुछ लोग वापिस गये। अबूजहल पर बहुत क्रोधित हुये। आगे न बढ़े।

निवारण के लिये परामर्श | आप ने मुसलमानों को इकट्ठा किया। आप हर काम सलाह से करते थे। वैसे तो अन्तिम निर्णय अल्लाह और उस के रसूल ही का है। लोग इकट्ठा हुये। आप ने मुहाजिरीन की ओर देखा। उन में से एक ने कहा-"अल्लाह का आदेश पूरा करने में देर न कीजिये। हम आप के साथ हैं। हम हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) की उम्मत की भाँति उत्तर न देंगे। उस ख़ुदा की सौगन्द जिसने आप को नबी बना कर भेजा। यदि आप संसार के दूसरे किनारे तक युद्ध करते चले जायेंगे तब भी हम आप का साथ नहीं छोड़ेंगे।"

अब आप ने अनसार की ओर मुँह किया।

उन्हों ने मदीने के भीतर ही सहायता की प्रतिज्ञा की थी। यह मामला बस्ती के बाहर का था। 'साद बिन मुआज़ अनसारी' उठे। उन्हों ने कहा-"ऐ अल्लाह के रसूल, आप पर दरूद और सलाम कदाचित आप का संकेत हमारी ओर है। हम उन सच्चाइयों पर ईमान रखते हैं जो आप लाये हैं। आप को सच्चा जानते हैं। यही नहीं बल्कि इस दीन की सच्चाई पर साक्षी भी हैं। आप के आदेश-अनुसार चलना हमारा धार्मिक कर्त्तव्य है। आप का जो संकल्प हो कर गुज़रिये। हम आप के साथ हैं। आप हमें समुद्र में कूदने की भी आज्ञा देंगे तो हमें संकोच न होगा। हमारा एक आदमी भी पीछे न रहेगा। हम शत्रु का सामना करने से नहीं घबराते। हम जम कर लड़ने वाले हैं। हमारा वार झूठा नहीं होता। कदाचित अल्लाह हमारी ओर से वह कार्य आप को दिखलादे जिस से आप की आंखों को ठन्डक पहुंचे। अल्लाह की बरकत आप के चरनों में है। प्रस्थान का संकल्प कीजिये।"

आप यह सुन कर बहुत प्रसन्न हुये। फिर कहा-"अच्छा चलो अल्लाह ने मुझ से प्रतिज्ञा की है।

काफ़िरों की क्षय का दृष्य साक्षात् देख रहा हूं।"

एक ओर नाच गाना तथा मद्पान

'बद्र' के मैदान में अन्तिम छोर पर क़ुरैश की सेना आकर ठहरी। उसने जल पर अधिकार जमा लिया। मुसलमान जिस भाग में थे वहाँ यह हाल था कि रेत में पाँव धंसते थे। चलना कठिन था। अल्लाह की कृपा से पानी बरस गया। अब क्या था, पानी ही पानी हो गया। लोगों ने हौज़ बना लिये। वुज़ू के लिये या पीने के लिये पानी का अभाव नहीं रहा। पृथ्वी सख़्त होगई। सुविधा से इधर उधर चल सकते थे। काफ़िर परेशानी में पड़ गये। चलते तो पाँव फिसलता। आदि अच्छा था अन्त ख़राब हुआ।

रात भर काफ़िरों ने उत्सव मनाया, गाने सुने, शराब पी। समझते थे हमारे टिड्डी दल के आगे यह मुसलमान क्या टिकेंगे। शक्ति के नशे में चूर थे। अपने जन्म दाता तथा स्वामी को भूले हुये थे।

दूसरी ओर ख़ुदा के आगे दीनता तथा विनयन

दूसरी ओर अल्लाह का सचा पैग़मबर, अल्लाह के आगे सजदे में पड़ा था। उसे पुकार रहा था— "ऐ हय्यो क़य्यूम ऐ हय्यो क़य्यूम," इसी हाल में

सवेरा हो गया। उस ने सारी रात अपने मालिक के दरबार में गिड़-गिड़ा कर, बिनती करते आंखों में काट दी। सवेरा हुआ, साथियों को नमाज़ के लिये इकट्ठा किया। नमाज़ पढ़ी। लोगों ने अल्लाह की राह में जान देने का महत्व बताया। यह लड़ाई मुल्क और धन के लिये नहीं, कुटुम्ब, क़बीले और अपनी बड़ाई जताने के लिये नहीं, यह लड़ाई सत्य के लिये है। सत्य के लिये जान देना मर्दों का काम है।

हज़रत साद बिन मुआज़ अनसारी ने एक ऊँची सी छाया वाला स्थान बना दिया था। यहाँ से आप पूरे मैदान को देख सकते थे। यहां से लड़ाई के बीच साथियों को आदेश देते रहे। ऐसी ऊँची सी जगह को अरबी भाषा में 'अरीश' कहते हैं। जहां आज-कल बद्र की मस्जिद बनी हुई है। उसी के समीप यह अरीश था।

लड़ाई अरब के नियमानुसार पहले एक ऐक करके लड़ाई हुई, और फिर थोड़ी देर में एक सेना दूसरी से गुथ गई। घमसान का युद्ध आरम्भ होगया। १० रमज़ान (१३ मार्च सन् ६२४ ई०) सोमवार को प्रातः काल युद्ध आरम्भ हुआ और

दोपहर नहीं होने पाई कि क़ुरैश की पूरी सेना तितर बित्तर हो गई। काफ़िरों के बड़े बड़े सरदार मारे गये। अबूजहल, 'उतबा', शैबा सभी खेत रहे। प्रायः सत्तर आदमी मारे गये, उतने ही बन्दी हुये। जो बच गये वे सिर पर पाँव रख कर भागे। मुड़ कर न देखा कि साथी किस हाल में हैं। युद्ध समाप्त होने के पश्चात् आप ने लाशों के दफ्न करने का प्रबन्ध किया। मुसलमानों की लाशें कम थीं। उन्हें रेत में दफ्न कर दिया गया। काफ़िर बहुत मारे गये थे। उन की लाशें एक गड्ढे में दबा दी गईं। युद्ध में आप का यही नियम था।

बन्दियों के साथ बरताव। मदीने पहुंच कर बन्दियों को सब मुसलमानों पर बाँट दिया गया। आप ने उपदेश दिया कि इन के साथ अच्छा बरताव करना। उस रात सब बन्दी इकट्ठे ही थे। अभी बाँटे नहीं गये थे। आपके चचा 'अब्बास' भी बन्दी होकर आये थे। उन्हें किसी ने बहुत कस कर बाँधा था। बन्धन की पीड़ा से वे कराह रहे थे। उन की आवाज़ सुन कर आप को नींद नहीं आई। रात गये तक जागते रहे। किसी ने पूछा तो बताया—"चचा कराह

रहे हैं, उन्हें पीड़ा है।" उन्हों ने जाकर बन्धन ढीले कर दिये, आप ने कहा-"तो सब की गिरहें एक जैसी करदो। बन्दियों में से अबू उज़ैर नामक एक अनसारी कुटुम्ब के भाग में पड़ा। वह अपना हाल कहता है-"उन लोगों को नबी के आदेश का इतना ध्यान रहता था कि सवेरे का खाना हो अथवा रात का, मुझे रोटी खिलाते और स्वयं खजूरें खाते। रोटी का छोटा सा टुकड़ा भी मिल जाता तो लेकर मेरे पास दौड़े आते। मैं हज़ार इनकार करता किन्तु वे न मानते। इन बन्दियों को बाद में बदले की रक़म लेकर छोड़ दिया गया। कुछ लोग यह रक़म अदा न कर सके थे। उन के लिये यह सुविधा देदी कि दस मुसलमानों को लिखना सिखा दें तो छोड़ दिये जायेंगे।

उहुद की लड़ाई 'उहुद' एक पर्वत का नाम है। यह पहाड़ मदीने के उत्तर पश्चिम लगभग दो मील की दूरी पर है। अब की युद्ध इस पर्वत की घाटी में हुई। काफ़िरों की सेना इसी घाटी के सिरे पर मदीने के आमने सामने इकट्ठा हुई। तीन हज़ार आदमी थे। सात सौ इनमें से कवच पहने हुये थे। दो सौ घोड़े

साथ थे। सतरह स्त्रियां थीं। स्त्रियां दफ़ बजा बजा कर गातीं। और बद्र के युद्ध में मारे जाने वालों के नाम लेकर वैन करती थीं। मतलब यह था कि सिपाहियों को जोश आये, लड़ने में पीछे न हटें।

यह सेना मक्के से चली तभी मुसलमानों को इस का हाल मिल चुका था। आप ने साथियों से प्रामर्श किया जो लोग किसी कारण-वश बद्र की लड़ाई में सम्मिलित न हो सके थे, उन को फ़िक्र थी, खुल कर मुक़ाबला हो। अल्लाह की राह में वीरता दिखाने और उसकी प्रसन्नता प्राप्त करने का अवसर मिले। वे कहते थे मदीने से निकल कर काफ़िरों का सामना किया जाये। आप की व्यक्तिगत् राय आबादी में रह कर लड़ने की थी। जब देखा कि अधिक लोग बाहर निकल कर लड़ने के पत्त में हैं, आप ने वही राय मान ली। प्रायः ऐसा होता कि यदि किसी अवसर पर अल्लाह का कोई विशेष आदेश न होता, तो आप उसी राय के अनुसार कार्य करते जिसकी ओर अधिक लोग होते। आप के साथियों का भी यही ढङ्ग था कि अपनी राय उस समय तक प्रगट करते रहते जब तक मालूम न हो जाता कि अल्ला और उसके रसूल के

आदेश से उनकी राय टकरा रही है।

मुसलमानों की सेना में कुल ७०० आदमी थे। उन में से केवल १०० कवच पहने हुये थे। और इतने आदमियों के बीच केवल दो घोड़े थे। इन लोगों ने 'उहुद' की जड़ में मोरचा लगाया। पहाड़ उन की पीठ पर था। पचास धनुर्दर थे। आप ने उनको एक छोटे से टीले पर नियुक्त किया और कहा-"तुम यह देखते रहो कि पीछे से आक्रमण न होने पाये। बानों की बौछाड़ से शत्रु को समीप न आने दो। सावधान, अपना अपना स्थान कदापि न छोड़ना। जब तक अपने स्थान पर जमे रहोगे, हमारा पल्ला भारी रहेगा। यदि तुम देखो कि गिद्ध हमारी बोटियाँ नोच रहे हैं तो भी अपना स्थान न छोड़ना।

पहला हल्ला | युद्ध का आरम्भ हुआ। 'बद्र' की भाँति आज भी मुसलमानों का पल्ला भारी था। 'हज़रत अली', 'साद बिन अबी वक्कास' (रज़ी-अल्लाहु अनहुम) और दूसरे मुहाजिर तथा अनसार अपनी तलवार के जौहर दिखा रहे थे। हज़रत अबू-दुजाना अनसारी का तो यह हाल था कि तलवार कुंठित हो जाती तो उस को पत्थर पर तेज़ करते और

फिर शत्रुओं पर टूट पड़ते। कोई न था जो काफ़िरों का झंडा हाथ में लेकर सीधा खड़ा हो सकता। जिस के हाथ में झंडा पहुंचता, इन वीरों की तलवारें मृत्यु की भाँति उस के सिर पर जा पहुँचतीं। और वह 'जहन्नम' की राह लेता। अन्त में शत्रु सेना में अबतरी फैल गई। लोग तितर बितर होगये। और सिर पर पाँव रख कर भागने लगे। यही वह नाज़ुक अवसर था जब मुसलमान अपने सरदार का आदेश भूल गये। साधारण सरदार नहीं! अल्लाह का रसूल, जिस के आदेश के प्रतिकूल कार्य कर के लाभ की आशा कदापि नहीं की जा सकती। मानव त्रुटी कर्त्तव्य-पालन की भावना पर विजय पागई। धनुर्द्धरों ने अपना स्थान छोड़ दिया और 'ग़नीमत का माल जमा करने में लग गये। 'हज़रत ख़ालिद बिन वलीद' उस समय तक मुसलमान नहीं हुये थे। काफ़िरों के सवार दस्ते की कमान उनके हाथ में थी। धनुर्द्धरों का टीले से हटना था कि वह अपने बचे खुचे साथियों समेत पीछे पहुँचे और आक्रमण कर दिया। मुसलमान तो ग़नीमत का माल जमा करने में लगे हुए थे, वे समझ बैठे थे कि युद्ध समाप्त

हो गया। और सत्य यह है कि समाप्त ही होगई थी, यदि धनुर्द्धर दस्ता अपना स्थान न छोड़ता –अकस्मात् जो आक्रमण हुआ तो बोखला गये। दोनों सेनायें एक दूसरे से ऐसी गडमड हुईं कि किसी को सुध नहीं रही। इसी हङ्गामे में एक व्यक्ति ने हज़रत 'मुसअब' 'बिन उमैर' को शहीद करके यह ख़बर उड़ादी कि (तोबा तोबा) वह दुष्ट नबुव्वत का चिराग़ बुझाने में सफल हो गया। इस ख़बर ने मुसलमानों की रही सही बुद्धि भी गुम करदी। बड़ी अबतरी फैल गई।

अब कुछ लोग जिन्हें असली हाल नहीं मालूम था, यह सोच कर शत्रु के दल में घुस गये कि आप के बाद जीवन व्यर्थ है। उहुद की इस घाटी में अपने प्यारे नबी पर क़ुर्बान हो जाना है, लौट कर मदीने नहीं जाना है।

मुहाजिर और अनसार में से चौदह शूरवीर आपके चारों ओर परे बाँध कर खड़े थे, और शत्रुओं को आप के समीप आने से रोक रहे थे। आप पर बलिदान हो जाने के सौभाग्य के आगे जीवन की पूँजी उन्हें तुच्छ जान पड़ती थी। इस लिये कि उन्हें

विश्वास था कि इस प्रकार उन्हें स्वर्ग प्राप्त होगा।

शत्रु आप के निकट पहुंच गये। उनके पथराव से आप का दाँत शहीद होगया। कुंड की कड़ियां चिहरे में धंस गईं। उन से रिक्त बहने लगा। ऐसे में किसी ने कहा-"ऐ अल्लाह के रसूल, इन दुष्टों को शाप दीजिये। ख़ुदा इन को नाश करे।" आप ने उत्तर दिया-"मैं संसार के लिये करुणा का स्वरूप बना कर भेजा गया हूं। शाप देना मेरा कर्त्तव्य नहीं। हे अल्लाह मेरी जाति के लोगों को सीधी दिखा। यह लोग अज्ञान हैं।"

युद्ध समाप्त होगया। काफ़िरों को जितनी सफलता भी हुई 'बद्र' के अनुभव के कारण वे उसको भी अधिक समझते थे। मदीने पर आक्रमण का साहस न हुआ। भय था कि जीत कहीं हार न हो जाये।

काफ़िरों की स्त्रियों ने 'बद्र' के प्रतिशोध के आवेश में मुसलमानों की लाशों से भी बदला लिया। उनके नाक कान काट लिये। 'हिन्द' (हज़रत मुआविया की माँ) ने इन फूलों का हार बनाया। और अपने गले में डाला। हज़रत हमज़ा की लाश

पर गई, और उन का पेट चीर कर कलेजा निकाला और चबा गई किन्तु कण्ठ से उतर न सका। इसलिये उगल देना पड़ा। इतिहास में हिन्द का उपनाम जो 'कलेजा-भक्षिणी' लिखा जाता है उस का कारण यही है। 'हिन्द' मक्का की विजय के समय ईमान लाई। किन्तु जिस प्रकार ईमान लाई वह भी बड़ा उपदेश-पूर्ण है।

इस युद्ध में बहुत सी मुसलमान महिलाओं ने भी भाग लिया था। हज़रत 'आइशा' तथा हज़रत उम्मे सुलैम जो हज़रत अनस की माँ थीं घाइलों को पानी पिलाती थीं। ठीक उस समय जब काफ़िरों ने पूरे ज़ोर से आक्रमण करदिया था, और आप के साथ केवल इने गिने शूर बीर रह गये थे, 'हज़रत उम्मे अम्मारा' आप के पास पहुंचीं और अपनी जान जोखिम में डालकर आप की रक्षा करने लगीं। काफ़िर जब आप की ओर बढ़ते तो तीर और तलवार से रोकतीं। इबने क़ुमय्या जब आप के पास पहुंच गया तो हज़रत उम्मे अम्मारा ने बढ़ कर रोका। उन के कंधे पर घाव लगा और गड्ढा पड़ गया। उन्हों ने भी तलवार मारी किन्तु वह दोहरा कवच

पहने था, इस लिये घाइल नहीं हुआ।

हज़रत 'सफ़िय्या' (हज़रत हमज़ा की बहिन) हार का समाचार सुन कर मदीने से निकलीं। आप ने उनके पुत्र हज़रत ज़ुबैर को बुला कर समझाया कि ये 'हमज़ा' की लाश न देखने पायें। हज़रत ज़ुबैर ने आप का संदेश सुनाया, बोलीं कि मैं अपने भाई का समाचार सुन चुकी हूँ, किन्तु ख़ुदा के मार्ग में यह कोई बड़ा बलिदान नहीं है। आप ने आज्ञा देदी, लाश पर गईं। स्त्री का हृदय, प्रिय भाई के टुकड़े बिखरे हुये थे, किन्तु केवल इतना कहकर चुप हो रहीं।

"हम सब अल्लाह के हैं और उसी की ओर पलट कर जाना है।" अनसार में से एक महिला के बाप, भाई, पति सब इस युद्ध में मारे गये थे। बारी बारी तीनों बज्र घटनाओं का समाचार उनके कानों में पड़ा, पर हर बार वह केवल यह पूछती थीं कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) कैसे हैं। जब यह मालूम हुआ कि आप कुशल पूर्वक हैं तो समीप आकर उन्हों ने आप का मुख मण्डल देखा और पुकार उठीं–

"आप के होते सब आपत्तियाँ हलकी हैं।"
मैं भी भाई भी पिता और पति सब न्योछावर।
धर्म-राजन, तेरे होते हुये हम कुछ भी नहीं॥

मुसलमानों की ओर सत्तर आदमी मारे गये। जिन में अधिक संख्या अनसार की थी। परन्तु मुसलमानों की दरिद्रता का यह हाल था कि इतना कपड़ा भी न था कि शहीदों को पूरा कफ़न दिया जाता। हज़रत मुसअब बिन उमैर आप के एक बड़े प्रिय साथी थे उन के कफ़न का कपड़ा इतना छोटा था कि पाँव छुपाया जाता तो सिर खुल जाता। और सिर ढाँका जाता तो पाँव खुल जाता। अंत में पाँव 'इज़ाख़र' नामक घास से छुपादिये गये। यह ऐसा शोक जनक दृष्य था कि पीछे भी कभी यह बात मुसलमानों को याद आजाती तो नेत्र तर हो जाते। शहीद लोग बिना नहलाये उसी प्रकार रक्त में लिथड़े हुये दो दो मिला कर एक क़ब्र में दफ्न किये गये।

दोनों सेनायें जब रणभूमि से अलग हुई तो मुसलमान घाव से चूर थे। फिर भी यह समझ कर कि अबु सुफ़िया ने मुसलमानों को प्रास्त समझ कर

दोबारा आक्रण न करे, आप ने मुसलमानों को संबोधित कर के कहा–"कौन इनका पीछा करेगा। शीघ्र ही सत्तर व्यक्तियों का एक गिरोह इस कार्य के लिये तय्यार होगया।

अबू सुफ़ियान उहुद से चल कर 'रौहा' स्थान पर पहुंचा। यहाँ आकर सोचा कि विजय अपूर्ण रह गई। आप को पहले ही से सन्देह था। दूसरे ही दिन आप ने घोषणा करादी कि कोई वापिस न जाये। आप सेना के साथ 'हमराये असद' तक जो मदीने से आठ मील पर है, गये। अबू सुफ़ियान को यह समाचार मिला तो लौटने का साहस न हुआ।

आप जब मदीने में लौट कर आये तो समस्त नगर शोक-पूर्ण था। आप जिधर से जाते घरों से रोने की सदा आती थी। आप ने समझाया कि मुर्दों के लिये चिल्ला चिल्ला कर रोना, कपड़े फाड़ना बाल नोचना, गालों पर थप्पड़ मारना यह सब ठीक नहीं। हाँ, हृदय में शोक का होना और नेत्रों से आँसू गिरना स्वाभाविक है, इस में कोई हर्ज नहीं।

यह लड़ाई शव्वाल सन् ३ हि० में हुई (मार्च

६२५ ई०) ७० मुसलमान शहीद हुये। २३ मुशरिक मारे गये।

वीरेमऊना की घटना सफ़र सन् ४ हि० में 'अबू बरा किलाबी' जो किलाब क़बीले का सरदार था, आप के पास आया और प्रार्थना की कि कुछ लोगों को मेरे साथ कर दीजिये कि मेरी जाति में इसलाम का प्रचार करें। आप ने फ़रमाया-"मुझ को नज्द की ओर से शंका है। अबूबरा ने कहा मैं उनका प्रतिभू हूँ।" आप ने स्वीकार कर लिया। और सत्तर अनसार साथ कर दिये। यह लोग 'मऊना' कुएं पर पहुँच कर ठहर गये और 'हराम बिन मलहान' को आप का पत्र देकर 'आमिर बिन तुफ़ैल' आमिर ने हत्या कवादी और आस पास क़बीलों के आदमी दौड़ा दिये कि तय्यार होकर आयें। एक भारी सेना तय्यार होगई, और आमिर के नेतृत्व में आगे बढ़ी। इधर मुसलमान लोग 'मऊना' के कुएं पर 'हराम' की वापसी की राह देख रहे थे। जब देर लगी तो आगे बढ़े, रास्ते में आमिर की सेना से मुडभेड़ हुई। काफ़िरों ने उन को घेर लिया और सब को मार डाला। केवल 'अम्र बिन उमय्या' को 'आमिर ने यह

कह कर छोड़ दिया कि "मेरी माँ ने एक ग़ुलाम को मुक्त करने की मनौती मानी थी इस लिये मैं तुम को मुक्त करता हूँ," यह कह कर उन की चोटी काटी और छोड़ दिया। मुसलमानों के इस गिरोह में हज़रत 'काब बिन ज़ैद' भी थे। काफ़िरों ने समझा कि यह भी शहीद होगये हैं, किन्तु उन में जान बाक़ी थी और इस प्रकार जीवित बच गये। आप को जब यह हाल मिला तो इतना शोक हुआ कि पूरी आयु में कभी नहीं हुआ। महीने भर प्रातह्-काल की नमाज़ में अत्याचारियों को शाप देते रहे।

हज़रत 'अम्र बिन उमय्या' ने वापसी में रास्ते में बनी आमिर के दो आदमियों को मार डाला, जिन को आप अमान दे चुके थे किन्तु उन को पता न था। जब आप ने यह सुना तो उन दोनों का हरजाना चुकाने की घोषणा कर दी।

रजी की घटना उन्हीं दिनों 'अज़ल' तथा 'क़ारा' जो दो प्रसिद्ध क़बीले हैं, उनके कुछ व्यक्ति आप के पास आये कि हमारे 'क़बीले' ने इसलाम ग्रहण कर लिया है। कुछ लोगों को हमारे यहां भेजिये

कि इसलाम के सुत्र तथा उसके आदेश सिखायें। आप ने दस व्यक्ति साथ कर दिये, जिनके सरदार हज़रत 'आसिम बिन साबित' थे। यह लोग जब 'रजी' नामक स्थान पर पहुंचे, जो 'उसफ़ान' तथा 'मक्का' के बीच में है, तो इन पापियों ने विश्वास-घात किया और 'बनूलहयान' के क़बीले को संकेत किया कि इन लोगों को मार डालें। 'बनूलहयान' ने दो सौ आदमी लेकर, जिन में सौ धनुर्द्धर थे, इन लोगों का पीछा किया और इनके समीप आगए। इन लोगों ने बढ़ कर एक टीले पर आश्रय लिया। धनुर्द्धरों ने उन से कहा कि "उतर आओ हम तुम को शरण देते हैं।" हज़रत 'आसिम' ने कहा-"मैं काफ़िर की शरण में नहीं आता" यह कहकर ख़ुदा से प्रार्थना की कि "अपने पैग़मबर को हाल पहुंचा दे" वह सात व्यक्तियों के साथ लड़ कर धनुर्द्धरों के हाथों शहीद होगये। (क़ुरैश ने कुछ लोगों को भेजा कि 'आसिम' के शरीर से माँस का एक लोथड़ा काट लायें कि उन की पहचान हो। ख़ुदा की महिमा ने शहीद मुसलिम का यह अपमान न होने दिया। मधु मक्खियों ने शव पर परा डाल दिया। क़ुरैश

असफल लौट गये।) किन्तु तीन व्यक्तियों ने, जिन के नाम 'अबदुल्लाह, ख़ुबैब और ज़ैद थे, काफ़िरों के प्रण पर भरोसा किया और टीले से उतर आये। काफ़िरों ने विश्वास-घात कर के उनको बंदी बना लिया। उन में से अबदुल्लाह को मार्ग ही में मार डाला, और बाक़ी दो आदमियों को मक्का लेजा कर बेच डाला। हज़रत 'ख़ुबैब' ने 'उहुद' की लड़ाई में 'हारिस बिन आमिर' को क़त्ल किया था इस लिये उन को हारिस के लड़कों ने ख़रीदा कि बाप के बदले में क़त्ल करेंगे। दो चार दिन के बाद हारिस के परिवार वाले उन को 'हरम' की सीमा से बाहर लेगये और क़त्ल करना चाहा। उन्हों ने दो रकअत नमाज़ पढ़ने की अज्ञा मांगी। क़ातिलों ने आज्ञा देदी। उन्हों ने दो रकअत नमाज़ पढ़ कर कहा— "जी तो चाहता था कि देर तक पढ़ता किन्तु इस लिये जलदी पढ़ ली कि तुम को भ्रम होगा कि मृत्यु से डरता हूं।" फिर यह पद्य पढ़ेः-

अपराध में मुस्लिम होने के जब मेरी हत्या होती है।
तो फिर अब इसकी क्या चिन्ता किस करवट मारा जाऊँगा॥
यह सब, अल्लाह की ख़ातिर है, और उसकी दया से आशा है।
कि शरीर के टुकड़े टुकड़े में, वृद्धि अधिकधिक पाऊँगा॥

उसी समय से यह रीति चल पड़ी कि जब कोई क़त्ल किया जाता है तो दो रकअत नमाज़ पढ़ लेता है।

तीसरे हज़रत ज़ैद थे। उनको 'सफ़वान बिन उमय्या' ने क़त्ल के इरादे से ख़रीदा उनके क़त्ल के समय क़ुरैश के बड़े बड़े सरदार तमाशा देखने आये। उनमें 'अबू सुफ़ियान' भी था। जब क़ातिल ने तलवार उठाई तो अबू सुफ़ियान ने कहा "सच कहो इस समय तुम्हारे बदले मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) क़त्ल किये जाते तो तुम इस को अपना स्वभाग्य नहीं समझते ?" हज़रत ज़ैद ने उत्तर दिया- "ख़ुदा की क़सम ! मैं तो अपने प्राण को इसके तुल्य भी नहीं समझता कि हुज़ूर के तलवों में कांटा चुभ जाये।" 'सफ़वान' के ग़ुलाम 'निसतास' ने उन की गरदन मारदी।

बनू नज़ीर को देश निकाला ऊपर यह बात आचुकी है कि हज़रत अम्र बिन उमय्या जब 'मऊने' के कुवाँ (का घटना) से बच कर आरहे थे तो दो काफ़िरों को जिन्हें आप अमान दे चुके थे अनजान में मार डाला था और आप ने अरब की

रीति के अनुसार जान का बदला देने की घोषणा करदी थी। आरम्भ में यहूदियों से जो संधि हुई थी, उस के अनुसार बदला देने में उन को भी भाग लेना था। इसके विषय में बार्तालाप करने के लिए आप उन के यहाँ गये। इधर आप से बात चीत होरही थी उधर यहूदियों ने एक व्यक्ति को संकेत कर दिया कि ऊपर से आप के ऊपर एक भारी पत्थर लुढ़का दे। किन्तु अल्लाह ने यह बात आप को बता दी और आप उठ कर चले आये। उन्हों ने फिर आप को बुलाया। आप ने कहला भेजा कि अब मुझ को तुम पर भरोसा नहीं। नई संधि करो तो तुम से बात चीत की जा सकती है। पुरानी संधी समाप्त।

यहूदियों की एक शाखा 'बनू क़ुरैज़ा' ने नई संधी करली। 'बनू नज़ीर' के पास बड़े बड़े गढ़ थे। वे इस अभिमान में अकड़ते रहे, अन्त में, आपने उन गढ़ों पर घेरा डाला। दो सप्ताह तक वे अपने गढ़ों में बैठे रहे। फिर स्वयं ही आप से यह प्रार्थना की कि "हम को अपने माल असबाब समेत यहाँ से निकल जाने की आज्ञा दी जाये।" आप ने

आज्ञा देदी, किन्तु इस शर्त के साथ कि हथयार के प्रकार की कोई वस्तु न ले जायें। दूसरी वस्तुयें जितनी लेजाना संभव हो ले जासकते हैं। घरों उठा लिया गया।

जाने लगे तो किवाड़ और चौखट तक उखाड़ ले गये। दीवारें तक सालिम न छोड़ीं। घर भूमि के बराबर कर दिये। जलन यह थी कि मुसलमान उनसे लाभ न उठा सकें। मदीने से निकल कर यह लोग ख़ैबर में और इनमें से कुछ जाकर शाम् बस गये।

छोड़ने को तो इन लोगों ने मदीना छोड़ दिया, किन्तु वहाँ के हरे भरे बाग़ों और लहलहाते हुये खेतों का ध्यान आता तो कलेजे पर साँप लोट जाता। शत्रुता की आग भीतर ही भीतर सुलग रही थी। मुसलमानों को नीचा दिखाने की इच्छा एक क्षण के लिये भी उनके हृदय से नहीं निकलती थी। अंत में शव्वाल ५ हि० (फ़रवरी ६२७ ई०) उन्हों ने अपनी जैसी कर भी ली।

'ख़नदक़' की लड़ाई ख़ैबर के यहूदी जो मदीने से देश निकाला पाकर वहां जा बसे थे, क़ुरैश के

पास गये। उन से कहा कि तुम हमारा साथ देने को कहो तो हम मुसलमानों से निपट लें। मक्के वाले मूर्ति पूजक थे, इस्लाम उन को एक आंख न भाता था। उस का सिद्धान्त है कि पूजा के योग्य केवल अल्लाह है। कोई उस का साझी नहीं। यह सब कुछ था। परन्तु वे यहूदियों के धर्म को भी अच्छा नहीं समझते थे। उन्हे ज्ञात था कि हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) का धर्म यदि कुछ मेल खाता है तो इस्लाम से, मूर्ति पूजा से तो उसका भी कोई सम्बन्ध नहीं। उन्हों ने यहूदियों से पूछा-"पहले यह बताओ कि हमारा धर्म अच्छा है अथवा यह नया धर्म जो हमारे ही परिवार के एक नवयुवक के हाथों फैल रहा है।" यहां क्या था। यहूदी तो मानो सत्य न बोलने की सौगन्द ले चुके थे। तुरन्त बोले-"तुम्हारा धर्म, तुम्हारे धर्म की इस नये धर्म से क्या तुलना।" क़ुरैश के भोले भाले लोग फूले न समाये। और यहूदियों की सहायता के लिए तय्यार होगये। यहां से चलकर, ख़ैबर वाले, 'ग़तफ़ान' क़बीले के पास गये। उन से भी इसी प्रकार की चाल फेर की बातें कीं। उन्हों ने साथ

देना स्वीकार कर लिया। चुपके चुपके मदीने पर आक्रमण की तय्यारियां होने लगीं।

मदीने में तीन ओर से घरों तथा खजूर के वृक्षों का क्रम था। जो पर कोटे का काम देता था। केवल शाम की ओर से खुला हुआ था। आप ने तीन हज़ार साथियों के साथ नगर से बाहर निकल उसी स्थान में खाई खोदने का प्रबन्ध आरम्भ किया। आप ने सीमायें स्वयं निश्चित कीं। दस दस आदमियों की एक टोली बनाई। हर टोली को दस गज़ पृथ्वी खोदनी थी। खाई की गहराई पाँच गज़ रखी गई। यह खाई २० दिनों में तीन हज़ार पवित्र हाथों द्वारा खुद कर तय्यार हुई।

स्मरण होगा कि जब 'मस्जिदेनबवी' बन रही थी, तो 'त्रिलोक-नायक' मज़दूरों के भेस में थे। आज भी वही दृश्य है। जाड़े की रातें हैं, तीन तीन दिन का उपवास है। 'मुहाजिर' तथा 'अनसार। अपनी पीठों पर मट्टी लाद लाद कर फेंकते हैं। औह अपने रसूल से प्रेम की उमंग में एक स्वर गाते हैं।

हम वे हैं जिन्हों ने मुहम्मद से।
यह प्रग किया है कि आजीना॥

सत-धर्म के हेतु अपना सब कुछ।
करते ही रहेंगे सदा अर्पण॥

विश्व उद्धारक भी मट्टी फेंक रहे हैं। आप के पेट पर गर्द भर गई है। इसी हाल में मुख से यह शब्द निकल रहे हैं।

क़सम अल्लाह की उसकी कृपा हम पर न होती तो।
कदाचित मार्ग यह सत्-धर्म का हम को नहीं मिलता॥
अब ऐ मालिक, हमारे हृदयों को धैर्य से भर दे।
जमा रण-क्षेत्र में हम को, पड़े यदि शत्रु से भिड़ना॥
ये टिड्डी दल जो आये हैं, हमें पथ-भ्रष्ट करने को।
लड़ेंगे इन से हम, यद्यपि पड़े प्रत्येक को मरना॥

इस के साथ साथ अपने साथियों को आशीर्वाद भी देते जाते थे।

पत्थर खोदते खोदते एक दृढ़ चट्टान आगई। किसी के तोड़े न टूटती थी। आप आए, तीन दिन का उपवास था और पेट पर पत्थर बंधा हुआ था। आप ने अपने शुभ हाथों से फावड़ा मारा तो मानों पानी होंगई।

खाई के पार मदीने की ओर तीन हज़ार शूरवीर अल्लाह की राह में जान देने को तय्यार

खड़े थे। दूसरी ओर क़ुरैश की सरदारी। जिन लोगों ने घेरा डाल रखा था उनकी संख्या दस हज़ार थी। इस में क़ुरैश, बनी नज़ीर का यहूदी परिवार तथा इन दोनों के साथी अन्य क़बीले सम्मिलित थे। आगे चल कर इस सेना में और अधिकता होगई। वह इस प्रकार कि 'बनू क़ुरैज़ा' के यहूदी भी उन से मिल गये। पहले इन लोगों ने संधि तोड़ने और मुसलमानों से लड़ने से साफ़ इनकार कर दिया। किन्तु यहूदी कुछ ऐसे प्रण के पक्के तो थे नहीं, अंत में आक्रमणकारियों से मिलगये।

इसलामी सेना में मुनाफ़िक़ भी सम्मिलित थे, जो केवल ऊपर से मुसलमानों के साथ थे। जब मौसम की कठोरता, रसद की कमी, लगातार उपवास और शत्रुओं की भारी सेना से पाला पड़ा तो क़लई खुलगई। आकर आप से आज्ञा माँगनी आरम्भ करदी कि "हमारे घर सुरक्षित नहीं हैं। हम को नगर में वापिस चले जाने की आज्ञा दी जाये।

प्रायः एक मास तक इस प्रकार घेरा वर्त्तमान रहा कि आप को और आप के साथियों को लगातार तीन तीन उपवास करने पड़े। एक दिन साथियों ने

व्याकुल होकर आप के सामने अपने पेट खोल कर दिखाये कि भूक के मारे पत्थर बंधे हैं। किन्तु जब आप ने अपना कुर्ता उठाय तो लोगों ने देखा कि एक के बदले दो पत्थर बंधे हैं। परिस्थिति इतनी भयानक हो गई थी कि एक बार आप ने लोगों को सम्बोधित् कर के कहा कि 'कोई है जो बाहर निकल कर घेरा डालने वालों का हाल मालूम करे ?" तीन बार आप ने यह शब्द कहे किन्तु हज़रत ज़ुबैर के अतिरिक्त और कोई तय्यार नहीं हुआ। आप ने इसी अवसर पर उन को 'हवारी' की पदूवी दी।

अब मुशरिकों की ओर से आक्रमण का यह प्रबन्ध किया गया कि क़ुरैश के प्रसिद्ध जनरलों अर्थात् 'अबूसुफ़ियान', 'ख़ालिद बिन वलीद', 'अम्र बिनिल आस', 'ज़रार बिनिल ख़त्ताब', ज़ुबैरा का एक एक दिन नियत हुआ। प्रत्येक जनरल अपनी बारी के दिन पूरी सेना को लेकर लड़ता था। खाई को पार नहीं कर सकते थे। किन्तु चूँकि चौड़ाई अधिक नहीं थी इस लिये बाहर से पत्थर और तीर बरसाते थे।

पर इस ढङ्ग में सफलता नहीं हुई तो निश्चय

किया कि साधारण युद्ध किया जाये। पूरी सेना एकत्र हुई। सब क़बीलों के सरदार आगे आगे थे। असंयोग वश खाई एक स्थान पर अपेक्षाकृत कम चौड़ी थी। यह स्थान आक्रमण के लिये चुना गया। अरब के चार प्रसिद्ध वीरों ने खाई के इस किनारे से घोड़ों को एड़ लगाई तो उस पार थे। उन में सब से अधिक बहादुर 'अम्र बिन अबदे वुद' था। वह एक हज़ार सवार के बराबर माना जाता था। बद्र की लड़ाई में घायल हुआ था और शपथ ली थी कि जब तक बदला न लूँगा बालों में तेल न डालूँगा। इस समय उस की आयु ८० साल की थी। फिर भी सबसे पहले वही आगे बढ़ा, और अरब की रीति के अनुसार पुकारा कि कौन मुझ से युद्ध करने आता है?" हज़रत अली ने उठकर कहा कि "मैं"! किन्तु आप ने रोका कि "यह 'अम्र बिन अबदे वुद' है।" हज़रत 'अली' बैठ गये, किन्तु 'अम्र' की सदा का और किसी ओर से उत्तर नहीं आता था। अम्र ने दोबारा पुकारा, और फिर केवल वही एक सदा उत्तर में थी। तीसरी बार जब आप ने कहा कि "यह अम्र है।" तो हज़रत 'अली' ने कहा कि "हाँ मैं जानता हूं कि यह 'अम्र' है। तब

आप ने आज्ञा दी। स्वयं अपने शुभ हाथों से 'अमामा' बांधा, तलवार प्रदान की।

'अम्र' का कथन था कि कोई मनुष्य संसार में यदि मुझ से तीन बातें कहेगा, तो एक अवश्य मान लूँगा। हज़रत अली ने उस से पूछा कि 'क्या वास्तव में यह तेरा कथन है।" फिर निम्न वार्ता हुई।

हज़रत अलीः-मैं कहता हूँ कि तू इस्लाम ग्रहण करले।

अम्रः- यह नहीं हो सकता।

हज़रत अलीः-युद्ध से वापिस चला जा।

अम्रः- मैं क़ुरैश की महिलाओं के व्यंग्य नहीं सुन सकता।

हज़रत अलीः-मुझ से युद्ध कर।

अम्र हँसा, और कहाः-"मुझे आशा नहीं थी कि आकाश के नीचे कभी मुझ से यह बात भी कही जायेगी।" हज़रत अली पैदल थे। अम्र की शान के खिलाफ़ था कि पैदल शत्रु से घोड़े पर सवार होकर लड़ता, इसलिये घोड़े से उतर गया, और पहली तलवार घोड़े के पाँव पर मारी कि कोंचे टट गईं। फिर पूछा कि 'तुम कौन हो।" हज़रत अली

ने नाम बताया। उस ने कहा-'मैं तुम से लड़ना नहीं चाहता।" हज़रत अली ने कहा-"हाँ किन्तु मैं चाहता हूँ।" 'अम्र' अब मारे क्रोध के व्याकुल होगया, परतले से तलवार निकाली और आगे बढ़ कर वार किया। हज़रत अली ने ढाल पर रोका, किन्तु तलवार ढाल में डूब कर निकल आई, और ललाट पर लगी। यद्यपि घाव गहरा नहीं था, फिर भी यह चिन्ह हज़रत अली के ललाट पर सदा के लिये रह गया। शत्रु का वार हो चुका तो, हज़रत अली ने वार किया। उन की तलवार कंध काट कर नीचे उतर आई। साथ ही हज़रत अली ने 'अल्लाहु-अकबर' का नाद किया। यह मानों जयघोष था।

आक्रमण का यह दिन बड़ा कठिन था। काफ़िर हर ओर से तीर और पत्थर का मेंह बरसा रहे थे। एक दम के लिये यह वर्षा थमने न पाती थी। यही दिन है जिसका वर्णन हदीसों में है कि आप की लगातार चार नमाज़ें क़ज़ा हुईं।

महिलायें जिस क़िले में थीं, वह 'बनूक़ुरैज़ा' की बस्ती के निकट था। यहूदियों ने यह देख कर कि पूरा जथा मोर्चे पर आप के साथ है। क़िले पर

आक्रमण किया। एक यहूदी क़िले के फाटक तक पहुंच गया, और क़िले पर आक्रमण का अवसर ढूंढ रहा था। हज़रत सफ़िय्या (आप की फूफी) ने देख लिया। महिलाओं की रक्षा के लिये हज़रत हस्साम (प्रसिद्ध कवि) नियत थे। हज़रत सफ़िय्या ने उन से कहा कि "उतर कर इस को क़त्ल कर दो, अन्यथा यह शत्रु को पता देगा।" किन्तु हज़रत हस्सान को एक ऐसा रोग था जिस के कारण युद्ध के नाम से काँपते थे। उन्हों ने अपनी लाचारी प्रगट की, और कहा कि "मैं इस काम का होता तो यहां क्यों होता।" हज़रत सफ़िय्या ने तंबू का एक खंभा उखाड़ लिया, और उतर कर यहूदी के सिर पर इतने ज़ोर से मारा कि सिर फट गया। हज़रत 'सफ़िय्या' चली आईं, और हज़रत हस्सान से कहा कि-"हथियार और कपड़े छीन लाओ।" हज़रत हस्सान ने कहा-"जाने भी दीजिये, मुझे इस की कोई आवश्यकता नहीं।" हज़रत सफ़िय्या ने कहा-"अच्छा जाओ उस का सिर काट कर क़िले के नीचे फेंक दो कि यहूदियों पर धाक बैठ जाये। किन्तु यह कार्य भी हज़रत सफ़िय्या ही को करना पड़ा।

यहूदियों को यह विश्वास होगया कि क़िले में भी कुछ सेना नियत है। इस ख़्याल से फिर उन्हों ने आक्रमण का साहस नहीं किया।

घेरे का समय जितना बढ़ता जाता था, घेरा का साहस घटता जाता था। दस हज़ार सेना को रसद पहुंचाना सहज नहीं था। इसके अतिरिक्त अल्लाह ने इतने ज़ोर का तूफ़ान भेजा कि तम्बू उखड़ गये। खाने के देग चूल्हों पर उलट गये। इस घटना ने सेना से बढ़ कर काम किया।

शत्रु में फूट | बनू क़ुरैज़ा इस युद्ध में इस शर्त पर सम्मिलित हुये थे कि क़ुरैश प्रतिभूमि में अपने कुछ सरदार उनके यहां छोड़ दें, किन्तु क़ुरैश ने यह शर्त पूरी नहीं की, इस लिये बनू क़ुरैज़ा के मन में उनकी ओर से कुछ शंका उत्पन्न हो गई, और उन्हों ने चुपके से आप से इस शर्त के साथ संधि का संदेश भेजा कि बनू नज़ीर को, जिन्हें देश निकाला दिया गया है, फिर मदीने आकर बसने की आज्ञा देदी जाये। इसका पता किसी प्रकार से क़ुरैश को चल गया। फलस्वरूप उन में फूट पड़ गई।

सारांश यह कि मौसम की ख़राबी, घेरे के समय

का लम्बा हो जाना, आँधी का ज़ोर, रसद की कमी और आपस की फूट, इतने कारण एकत्र होगये कि क़ुरैश अब और नहीं जम सकते थे। अबू सुफ़ियान ने सेना से कहा–"रसद समाप्त होगई, मौसम का यह हाल है, यहूदियों ने साथ छोड़ दिया। अब और घेरा डाले रहना बेकार है।" यह कह कर लौटने की घोषणा कर दी। 'ग़तफ़ान' क़बीले वाले भी उन के साथ ही चल दिये। बनू क़ुरैज़ा भी घेरा छोड़ कर अपने क़िलों में चले गये।

विश्वास घात का दण्ड | ख़न्दक़ की लड़ाई में बनू क़ुरैज़ा ने धोका दिया था। संधी के विपरीत मदीने पर आक्रमण करने वालों की सहायता की। पड़ोस में रहते थे, इन से सदा शंका थी। इस लिये आप ने पूरी सेना लेकर उनके क़िलों के चारों ओर घेरा डाल दिया। प्रायः पचीस दिन तक घेरा रहा। अन्त में यहूदियों का साहस छूट गया। उन्हों ने आपके पास कहला भेजा कि हम 'औस' क़बीले के सरदार 'साद बिन मुआज़' को पंच बनाते हैं। वह हमारे बारे में जो निर्णय कर देंगे, हमें स्वीकार होगा। 'औस' क़बीले और बनू क़ुरैज़ा में इस्लाम से

से पूर्व बड़ा मेल था। यहूदियों को आशा थी कि हज़रत 'साद' उनका पक्षपात करेंगे। उन्हों ने पक्के न्याय के साथ निर्णय दिया। विश्वास घात का जो दण्ड यहूदियों के धर्म-ग्रन्थ 'तौरात' में लिखा हुआ है, हज़रत 'साद' ने यहूदियों के लिये वही दण्ड निश्चय किया, अर्थात् जितने लड़ने योग्य व्यक्ति हों सब क़त्ल कर दिये जायें, स्त्रियाँ तथा बच्चे बन्दी बना लिये जायें, और उनका सारा धन बाँट दिया जाये।

इस घेरे के सम्बन्ध में केवल एक मुसलमान शहीद हुआ। उनका नाम 'ख़ल्लाद बिन स्वैद' था। वह इस प्रकार कि एक यहूदी स्त्री ने ऊपर से चक्की का पाट ढकेल दिया। वह स्त्री क़त्ल कर दी गई।

हुदैबिया की संधि। ज़ीक़ादा सन् ६ हि० (फ़रवरी सन ६२८ ई०) में आप काबे की ज़ियारत के विचार से मदीने से चले। युद्ध का विचार नहीं था। मक्का छोड़े हुये ६ साल हो चुके थे। इस बीच हज के लिये भी वहाँ जाने का संयोग आपको नहीं हुआ था। आप ने उधर का विचार किया तो बहुत से मुहाजिर, अनसार और अरब के भिन्न भिन्न क़बीलों के लोग

साथ हो लिये। आप ने 'उमरे का इहराम' भी बाँध लिया था ताकि क़ुरैश को संतोष रहे और यह शंका भी न रहे कि आप युद्ध के विचार से निकले हैं। क़ुर्बानी के जानवर भी साथ थे। प्रायः सत्तर रहे होंगे। साथियों में से कुछ तो मदीने ही में आमिले थे। बाक़ी राह में साथ होते गये। इस प्रकार कोई १४०० या १६०० की जमाअत होगई। इन लोगों के पास किसी प्रकार का हथियार नहीं था। केवल तलवार थी। जो परतते के अन्दर रखी जाती थी। अरब में यह रिवाज था कि तलवार अवश्य अपने साथ रखते थे। उस को पंथी का हथियार कहा जाता था।

राह में एक आदमी से भेंट हुई जिस ने बताया कि क़ुरैश को इस यात्रा की सूचना मिल चुकी है। और वे आपको रोकने के लिये निकल भी पड़े हैं। बड़े साहस के साथ अन्तिम घड़ी तक लड़ने के संकल्प से निकले हैं। यही कारण है कि दूध देने वाली ऊँटनियाँ तथा बच्चे वाली मायें तक पीछे नहीं छोड़ी गई हैं। 'ख़ालिद बिन वलीद' को एक सवार दस्ते के साथ पहले ही भेज दिया गया है। यह सुनकर आप

ने फ़रमाया :–"खेद है क़ुरैश पर, रोज़ रोज़ का युद्ध उन्हें खा गया। फिर भी उन्हें होश न आया। मुझ को और बाक़ी अरब को निपट लेने देते। यदि मैं उन्हें सीधी राह पर न ला पाता और प्रास्त हो जाता तो इनकी मनो कामना पूरी हो जाती। और यदि खुदा मुझे विजयी करता तो ये भी अल्लाह के दीन में आ जाते और फिर भी न मानते तो पूरी शक्ति से एक बार युद्ध कर लेते। क़ुरैश वाले समझते क्या हैं? खुदा की क़सम मैं इन सच्चाइयों के लिये अपना सब कुछ लगा दूँगा जिन को फैलाने के लिये मुझे भेजा गया है। या तो अल्लाह का दीन विजयी होगा या फिर यह जीवन अपने अन्त को पहुंच जाये।"

संधि के लिए दूत आने लगे। लड़ाई का विचार नहीं था इस लिये आपने मार्ग बदल दिया। ताकि क़ुरैश के सवार दस्ते से मुडभेड़ न हो। व्यर्थ लड़ाई की नौबत क्यों आये। आप ने फ़रमाया :–"आज मैं युद्ध के विचार से नहीं निकला हूँ। क़ुरैश के लोग आज जितनी नम्रता करने को कहेंगे करूँगा।"

थोड़ी दूर चलने के बाद आपकी ऊँटनी आप ही

आप एक स्थान पर बैठ गईं। इस लिये सब साथी रुक गये। डेरे डाल दिये गये। अब क़ुरैश के दूत आने लगे। कोई जासूसी के लिये आया। कोई बातचीत से आपका विचार मालूम करने आया। किसी को क़ुरैश ने भेजा। कोई उनके संकेत पर आया। बहुत से स्वयं आये। यह देखने के लिये कि मक्के से निकाले हुये लोगों के रंग ढंग क्या हैं। नया दीन ग्रहण करने के कारण उनमें क्या परिवर्तन हुआ है।

इन आगंतुकों में से जो भी आपके पास आया, आप ने उस से एक ही बात कही–"हम लड़ने नहीं आये। काबे की ज़ियारत करेंगे, वापस जायेंगे। हमारे साथ क़ुर्बानी के जानवर हैं। हम कोई सैनिक तैयारी कर के नहीं चले हैं।"

'उर्वा बिन मसूद सक़फ़ी' आये। उन्हों ने मुसलमानों को क़ुरैश की तय्यारी से डराना चाहा। कहने लगे–"अब की बार तो वे लोग बड़ी तय्यारी से निकले हैं। पशु और स्त्रियाँ तक उन्हों ने पीछे नहीं छोड़ी हैं। चीते के समान बिफरे हुये हैं। आपके साथी उनके आगे एक छण भी न टिक सकेंगे। ऐसे बिखर जायेंगे जैसे बालू के कण। आपका साथ छोड़

देंगे।" यह सुन कर 'हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़' को क्रोध आगया-"हम इन असत्यवादियों के आगे न ठहर सकेंगे ? कैसी बातें करते हो ?" बड़ी तेज़ तेज़ बात चीत होगई। 'उर्वा बिन मसऊद' बोले-"तुमने मुझ पर एक उपकार किया था। उसके कारण मेरी गरदन झुकी हुई है। क्या उत्तर दूँ।" वापस गये। क़रैश से कहा--"मैंने बड़े बड़े दरबार देखे हैं। 'क़ैसर' तथा 'किसरा' का दरबार भी देखा है। किन्तु मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथी आप-की जैसी प्रतिष्ठा करते हैं और उनके हेतु प्राण देने के लिए जिस प्रकार तय्यार रहते हैं, वह मुझे बड़े से बड़े दरबार में भी नहीं दीख पड़ी। उनके वज़ू का पानी गिरता है तो मुँह और आँखों पर मल लेते हैं। कोई उन से आंख मिला कर बात नहीं करता। सम्मुख होते हैं तो आदर तथा सम्मान के भाव से दृष्टि नीची रखते हैं। बातचीत इतने धीमे स्वर में करते हैं कि नए आदमी को धोका हो कि कान में बात कर रहे हैं। उनके साथी कदापि तुम्हें उन तक न पहुंचने देंगे। तुम उनकी लाशों पर से होकर ही उनके सरदार तक पहुंच सकते हो। वे वास्तव में लड़ने

नहीं आए हैं। मेरी राय में तुम उनकी बात मान लो।"

कुछ क़ुरैश नव युवकों को यह सूझी कि चुपके से आक्रमण कर दिया जाए। मुसलमान लड़ने नहीं आये थे फिर भी क़ुरैश की बातों से संतुष्ट नहीं थे। पहले ही से सावधान थे। ये लोग धर लिए गए। बन्दी बना कर आपके पास लाए गए। 'त्रिलोक-मंगल' ने उन्हें क्षमा कर दिया। फ़रमाया--"जाओ, आज मैं हर नर्मी बरतने का विचार कर चुका हूँ।"

जब आप ने देखा कि क़ुरैश को किसी प्रकार संतोष नहीं होता तो 'हज़रत उसमान रज़ियल्लाहु अनहु' को अपना प्रतिनिधि बना कर भेजा। वे मक्के गये 'मुशरिकों' से कहा--"वास्तव में हम लोग लड़ने नहीं आए हैं। काबे का 'तवाफ़' करेंगे। अपनी राह वापस जाएंगे। क़ुरबानी के जानवर साथ लाए हैं। युद्ध का विचार होता तो ऐसे आते ?" यह देखो 'इहराम' बँधा है। झूठ बोलना हमारा काम नहीं। ख़ुदा से डरने वाले झूठ नहीं बोला करते।" उनके कुटुम्ब वालों ने कहा--"तुम्हारी बात दूसरी है। यद्यपि बाप दादा के दीन से फिर गए हो, फिर तुम 'तवाफ़' कर सकते हो। हम तुम्हारे साथ इतनी नर्मी कर सकते

हैं। बाक़ी लोगों को तो वापस जाना ही होगा।" 'हज़रत उसमान' ने आवेश में आकर कहा--"यह मरते दम तक नहीं हो सकता कि जिस की प्रसन्नता प्राप्त करना मेरा ईमान है उसको छोड़ कर मैं अकेला 'तवाफ़' कर लूँ।" वे बोले--"अच्छा, तो फिर जैसी तुम्हारी इच्छा हो। किन्तु यह भी समझ लो कि तुम स्वतन्त्र नहीं हो। इस समय से हमारे बन्दी हो। वापस नहीं जा सकते।

बैअति रिज़वाँ 'हज़रत उसमान' वहाँ बन्दी बना लिये गये और मुसलमानों में यह समाचार फैल गया कि वे शहीद कर डाले गये। आप ने लोगों को एक वृक्ष के नीचे एकत्र किया। फिर उन से आत्म-त्याग की प्रतिज्ञा ली। इस प्रतिज्ञा को हमारे इतिहास में 'बैअते रिज़वाँ' कहा गया है। क्योंकि अल्लाह ने यह प्रतिज्ञा करने वालों से अपनी प्रसन्नता 'क़ुरआन मजीद' में प्रगट की है। इसमें १४०० व्यक्ति सम्मिलित थे। वह वृक्ष जिसके नीचे आपने यह प्रतिज्ञा ली, 'हज़रत उमर के ख़िलाफ़त काल तक वर्त्तमान था। लोग उसका 'तवाफ़' करने लगे तो आप ने उसको कटवा दिया। इस लिये कि इतनी

अच्छी घटना का स्मारक कहीं शिर्क का कारण न बन जाये। शिर्क की तो ख़ुदा ने भी बड़ी निन्दा की है।

मक्के वालों को इस प्रतिज्ञा का हाल मिला तो बहुत भयभीत हुये। जो ज़रा समझ वाले थे वे बोलेः "कुशलता इसी में है कि संधि करलो। किसी को फिर भेजो। अब की साल वापस चले जायें। अगले साल आयें, हमको आपत्ति न होगी। हमारी बात रह जाये, अरब के लोग हम पर व्यंग न करें। इतनी ही हमारी इच्छा है।" 'सुहैल बिन अम्र' को प्रतिनिधि चुना गया। वे आप से बात करने चले। उनको आते देखा तो आप ने फ़रमाया--"अब क़ुरैश वास्तव में संधि करना चाहते हैं। मैं तो पहले ही कह चुका हूँ कि आज मेरी ओर से उनके लिये हर प्रकार की नरमी है।"

संधि हो गई, यह बातें तै पाईं:--

(१) इस साल मुसलमान बिना काबे का दर्शन किये वापस जायें। अगले साल आयें। तलवार के अतिरिक्त, जो परतले में रहेगी दूसरा कोई हथियार साथ न लायें। क़ुरैश पूर्णतया मक्के को ख़ाली करदें तब मुसलमान प्रवेश करें। दर्शन के लिये तीन दिन

से अधिक ठहरने का उनको अधिकार न होगा।

(२) दस वर्ष तक कोई युद्ध नहीं होगा। मार्ग सुरक्षित रहेंगे। चोरी और डाके को भी संधि का विरोध समझा जाएगा।

(३) क़ुरैश का कोई व्यक्ति अपने कुटुम्बियों की इच्छा के प्रतिकूल मुसलमानों के पास चला आएगा तो वे उस को वापस कर देंगे, और कोई मुसलमान क़ुरैश में चला जायेगा तो वे उसको वापस करने पर आबद्ध न होंगे।

(४) अरब के अन्य क़बीलों में से प्रत्येक स्वतन्त्र होगा कि मुसलमानों तथा क़ुरैश में से जिस से चाहे मिल जाये।

संधि के इस भाग के अनुसार 'ख़ुज़ाआ' का क़बीला मुसलमानों से मिल गया और 'बक्र' का क़बीला क़ुरैश से।

प्रतिज्ञापालन का अलौकिक उदाहरण। प्रतिज्ञा-पत्र अभी लिखा ही गया था कि 'हज़रत अबूजनदल रज़ियल्लाहु अनहु' मुसलमानों के सामने आखड़े हुए। हाथ हथकड़ियों में जकड़े हुए, पाँव में बेड़ियाँ पड़ी हुईं। ये 'सुहेल बिन अम्र के बेटे थे। मुसलमान हो-

गये थे और अपने दीन के कारण परिवार वालों का अन्याय सह रहे थे। पता नहीं कैसे छूट निकले और वहाँ पहुँच गए। 'सुहैल' तुरत उठ खड़ा हुआ और बोला–"मुहम्मद, (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) प्रतिज्ञा पत्र लिखा जा चुका। अब तुम इनको रोक नहीं सकते। इन्हें वापस करना होगा।" इतनी देर में 'अबूजनदल' सामने आ खड़े हुए। वे कह रहे थे--"भाइयो, क्या कहते हो। मैं वापस जाऊँ? और ये काफ़िर मेरे दीन के कारण मुझे कष्ट पहुँचाते रहें?" आप ने उनकी बात का कोई उत्तर नहीं दिया। 'सुहैल' को सम्बोधित करके फ़रमाया--"हाँ, प्रतिज्ञा हो चुकी, हम उसके विरुद्ध नहीं करेंगे।" फिर 'अबू-जनदल रज़ियल्लाहु अनहु' को सान्त्वना दी और फ़रमाया--"अबूजनदल, धैर्य धरो, अल्लाह पर भरोसा करो। वह शीघ्र ही तुम्हारे छुटकारे की कोई राह निकाल देगा।" 'अबूजनदल' की वापसी मुसलमानों को बहुत खली। वे तड़प उठे। ख़ून के घूँट पी कर रह गये, किन्तु क्या करते प्रतिज्ञा हो चुकी थी। अल्लाह और उसके रसूल की यही इच्छा थी।

खुली हुई जीत | इस संधि को क़ुरआन पाक

में 'प्रत्यक्ष विजय' कहा गया है। वैसे देखने में तो मालूम पड़ता है कि आप ने बहुत दब कर संधि की। किन्तु वास्तव में :--

(१) यह संधि अपने परिणाम तथा प्रभाव की दृष्टि से हार नहीं, खुली हुई जीत थी। दोनों पक्ष के लोगों को एक दूसरे की ओर से पूरा सन्तोष होगया इस प्रकार दीन फैलाने के लिए रास्ता साफ़ हुआ।

(२) शान्ति पूर्वक लोगों से मिलने और अपनी बात कहने की राह निकली। पहले सदा युद्ध की शंका लगी रहती थी। शान्त चित्त से न तो मुसलमानों को अपनी बात कहने का अवसर मिलता था न दूसरों सुनने का। इस सन्धि के पश्चात् लोग परस्पर एक दूसरे से मिलने लगे। जो लोग अब तक मुसलमान नहीं हुये थे उनके लिये यह सुविधा हो गई कि उस भेद को समझ सकें जो मुसलमान होजाने के बाद मानव जीवन में होजाता है। मुसलमान अब तक काफ़िरों से लड़ते ही नहीं रहे थे। उन्हों ने और भी बहुत से काम किये थे। उनका जीवन, उनका चलन इतने दिनों में बहुत कुछ बदला था। युद्ध के समय भी इसका कुछ अनुमान दूसरों को होता था। उनके बंदी

छूट कर जाते तो अपना अनुभव बताते। यात्राओं में रास्ते से गुज़रते हुए लोग इनको देखते, इक्का दुक्का आदमी आपके पास आ निकलता तो उसको भी एक झलक इस नये जीवन की नज़र आ जाती। यह सब कुछ था, परन्तु लड़ाई तथा असन्तोष के वातावरण में अच्छाइयां कम दीख पड़ती हैं और बुद्धि उस हृदय के पीछे चलती है जिस में नानाप्रकार के अकारण सन्देहादि का अंधकार छाया रहता है।

(३) अब लोगों को पूरा अवसर मिला कि मुसलमानों को निकट से भली भाँति देखें। और उन तथ्यों को ठीक से परखें जिन्हें फैलाने के लिये अल्लाह ने 'विश्वनायक' हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहिवसल्लम को इस संसार में भेजा। उन्हों ने देखा और परखा और भारी संख्या में अल्लाह का दीन ग्रहण करते गये। 'हुदैबिया' में आपके साथ १४०० आत्मत्यागी थे, मक्का की विजय के समय यह संख्या दस हज़ार तक पहुंच गई।

(४) इस अवसर से लाभ उठा कर आप ने समय के बड़े बड़े राजों, महाराजों तथा क़बीलों के सरदारों को पत्र लिखे। अपने दूत भेजे, उन पत्रों में

इस्लामी सिद्धान्तों का एक संक्षिप्त रेखाचित्र प्रस्तुत किया गया था। और उन को नम्रता पूर्वक इस्लाम ग्रहण करने को कहा गया है। संधि ही का परिणाम था कि आपके दूतों को राह में कोई न टोकता। संधि काल में प्रायः पूरे अरब ने इस्लाम ग्रहण कर लिया। और अरब के बाहर भी भिन्न भिन्न राष्ट्रों तथा देशों तक यह संदेश पहुँच गया।

(५) इस संधि का ऐक महत्व यह भी है कि इस इस्लाम को एक स्वतन्त्र शक्ति मान लिया गया। जिसका स्थान क़ुरैश से, जो अरब की सरदारी के दावेदार थे किसी प्रकार कम न था।

कसौटी | संधि से होने वाले लाभों का अनुमान उस समय मुसलमान न कर सके। इस कारण कुछ लोगों को बड़ी उलझन हुई। परन्तु उन लोगों के लिये शुद्ध तथा अशुद्ध की कसौटी, अल्लाह और उसके रसूल का आदेश था इस लिये उन का हृदय इस संधि पर सन्तुष्ट हो गया था। फिर जब इस की अच्छाइयाँ सामने आईं, तो उन्हों ने अल्लाह के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रगट की, और आरम्भ में थोड़ी देर के लिये जो संदेह उत्पन्न होगया था उसके लिये

क्षमा चाही।

खैबर की जीत | इस संधि के पश्चात् .क़ुरैश और उनके मित्र क़बीलों की ओर से मुसल्मान निश्चिन्त होगये, किन्तु एक दूसरी बाधा अभी वर्तमान थी। खैबर के यहूदी सदा इस ताक में लगे रहते थे कि कोई अवसर पायें और मुसलमानों के विरुद्ध लोगों को भड़कायें। अब आप ने उनकी ओर ध्यान दिया और मुहर्रम ७ हि० (६२८ ई०) में आप इस्लामी सेना के साथ एक दिन प्रातःकाल वहाँ जा-पहुँचे।

खैबर मदीने से प्रायः १६ मील की दूरी पर है। यहाँ की समस्त आबादी यहूदी थी। ये लोग एक स्थान पर एकत्र होकर नहीं रहते थे। बल्कि आस पास की घाटियों में फैले हुये थे। उनके क़िले खजूर के बाग़ों और गेहूँ के खेतों के बीच थोड़ी दूरी पर बने हुये थे। और यही बस्ती अब यहूदियों के षड़यंत्र का केन्द्र थी। इस को तोड़ना अत्यावश्यक था। पास ही 'ग़तफ़ान' का क़बीला रहता था। इन लोगों से यहूदियों के सम्बन्ध थे। शंका थी कि यहूदियों से युद्ध हुआ तो ये लोग उनकी सहायता करेंगे। इस लिये

आप ने सेना को आज्ञा दी कि ऐसे स्थान पर पड़ाव डाले जो इस क़बीले और यहूदियों की बस्ती के बीच में हो। यहूदियों के घिर जाने का हाल मिला, तो इन लोगों ने सहायता का विचार किया, किन्तु जब देखा कि यदि हम बाहर निकले तो हमारे बाल बच्चे शत्रु के घेरे में आजायेंगे, तो चुप होकर बैठ रहे।

६ दिनों तक यहूदियों के क़िले का घेरा जारी रहा। यहूदी मैदान में निकलकर न लड़ते थे। एक दो आदमी निकलकर बाहर आते, चोरी छुपे आक्रमण करते, फिर भाग कर क़िलों में घुस जाते। किन्तु कब तक? एक एक करके सब क़िले जीत लिये गये। यहूदियों ने हार मान ली। इस लड़ाई में प्रायः ६३ यहूदी मारे गये, १५ मुसलमान शहीद हुये। बहुत सा ग़नीमत का माल हाथ आया। सोने चाँदी और अनाज के अतिरिक्त भारी संख्या में विभिन्न प्रकार के हथियार, कवच, तलवार और भाले थे। तौरात के कुछ ग्रन्थ भी हाथ लगे। उसे आप ने यहूदियों को वापस कर दिया। इस से प्रभावित होकर एक यूरोपियन इतिहासकार ने लिखा है :-

"यह घटना प्रमाण है ईस बात का कि आप के

हृदय में उन ग्रन्थों की कितनी प्रतिष्ठा थी। यहूदी इस उपकार की कमी को भूल नहीं सकते। रूमियों का 'यरोशलम' पर अधिकार हुआ तो उन्होंने पवित्र ग्रंथ के अपमान में कोई कसर नहीं छोड़ी। जलाया भी और पैरों तले रौंदा भी। फिर ईसाइयों ने 'स्पेन' में यहूदियों के साथ युद्ध के समय इन पवित्र ग्रंथों को अत्यन्त अपमान के साथ जलाया। 'हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहिवसल्लम) और इन सब लोगों के बरताव में कितना अंतर है।

ख़ैबर की पूर्ण विजय के बाद आपने यहूदियों को इस की आज्ञा दी कि वे अपनी बस्ती में रहें। खेती बाड़ी बाग़ों की देख भाल स्वयं करें। किन्तु पैदावार का आधा उन्हें बैतुलमाल (इस्लामी कोष) में जमा करना पड़ेगा।

सब मिलाकर इस घेरे में एक मास का समय लगा। इस से वापस होते हुए 'फ़िदक़' के यहूदियों से भी इन्हीं शर्तों पर संधि हो गई।

<u>जस करनी तस भोग</u>। आप ने सदा अगले नबियों के अनुयायियों की ओर मेल मुहब्बत का हाथ बढ़ाया। उनसे सलाह सफ़ाई रखने की चेष्ठा की।

मदीने पहुंचे तो यहूदियों से संधि कर ली। किन्तु आपकी इन बातों को वे मुसलमानों की निर्बलता समझते रहे। जब भी अवसर मिला, खुल्लम खुल्ला या चुपके चुपके उन्हों ने गड़बड़ उत्पन्न करने में अपने बस भर कोई कमी नहीं की। उन को अपनी संपत्ति तथा शक्ति पर बड़ा अभिमान था। एक बार उन में से किसी ने यहाँ तक कह दिया–"हम लोग क़ुरैश नहीं हैं। वे लड़ना क्या जानें। उन पर आप ने विजय प्राप्त कर लिया। यदि कभी हम से सामना हुआ तो पता चलेगा कि रणवीर ऐसे होते हैं।

आप ने मदीने के दोनों क़बीलों औस और ख़ज़रज में मेल करा दिया। यह भी उनको बहुत खलता था। इन दोनों परिवारों की वर्षों पुरानी लड़ाई के कारण यहूदियों की चाँदी थी। दोनों को लड़ाते रहते। स्वयं चौधरी बने रहते। उनकी सूझ बूझ का रंग जमा हुआ था। महाजनी व्यवसाय खूब चला हुआ था। इस्लाम आया तो औस तथा ख़ज़रज में मेल होगया। सूद व्याज वाले उद्योग की बड़ी निन्दा की गई, और अपने दरिद्र साथियों की सहायता करने की शिक्षा दी गई। इन सब बातों ने मिल मिला कर

उस जाल के टुकड़े कर दिये जो यहूदियों ने मदीने की पूरी आबादी पर डाल रखा था। यह देख कर वे भीतर ही भीतर घुट कर रहते और मुसलमानों की बुराई के प्रत्येक अवसर से लाभ उठाने में न चूकते।

आप ने सोंचा था। इनके पास भी अल्लाह का भेजा हुआ ग्रन्थ है। बहुत सी बातें हमारे उनके बीच एक समान हैं। कम से कम उन में तो हमारा साथ देंगे। वास्तव में दीन तो एक ही है। यही इस्लाम उनके नबी हज़रत मूसा (अलैहिस्लाम) भी लेकर आये थे। अब वही दीन अपने अन्तिम और पूर्ण रूप में आया है। इसे पाकर वे प्रसन्न होंगे और अवश्य मान लेंगे। किन्तु इन सारी आशाओं पर पानी फिर गया। जब अवसर मिलता वे विश्वास-घात करते। मुसलमानों के विरुद्ध लोगों को भड़काते आपस में फूट डालने का प्रयत्न करते। इन सारे कुकर्मों का फल इन्हें भोगना पड़ा। देश निकाला मिला। क़त्ल किये गये। उन की शक्ति छिन्न भिन्न होगई।

हबश में जो लोग रह गये थे उनकी वापसी:

अभी तक आप के चचेरे भाई 'जाफ़र बिन अबीतालिब' 'हबश' ही में थे। उनके साथ कुछ और मुसलमान भी थे। प्रायः पन्द्रह सोलह आदमी रहे होंगे। उसी समय वे लोग वापस आये। नज्जाशी ने उनको बड़े प्रबन्ध तथा सुविधा से भेजा। भाई से मिलकर आप बड़े प्रसन्न हुये। उनके ललाट को चूम लिया और खड़े होगये। फिर फ़रमाया—"ख़ैबर की विजय की ख़ुशी मनाऊँ या इतने दिनों से बिछड़े हुये भाई के आगमन की। तुम रूप तथा आचरण दोनों में मुझ से मिलते जुलते हो।" यह साधारण प्रशंसा न थी हज़रत जाफ़र जितना प्रसन्न होते कम था।

मूना की लड़ाई आप ने विभिन्न देशों तथा राष्ट्रों को पत्र और दूत भेजे थे। एक आदमी 'बसरा' के अधिकारी के पास भी भेजा था। उसको रास्ते में एक ईसाई अरब ने शहीद कर डाला। दूत को मारने की रीति उस समय भी नहीं थी। आपको हाल मिला तो अत्यन्त दुख हुआ। आप ने 'हज़रत ज़ैद बिन हारिस' के सेनापतित्व में तीन हज़ार शूरवीरों की सेना भेजी। यह ज़ैद बिन हारिस वही थे जिन्हें बाल्यावस्था में आप ने ख़रीदा था फिर अपना पोष्य-

पुत्र बना लिया। उनके पिता और चचा लेने के लिये आये तो ये उनके साथ जाने पर तैयार नहीं हुये। सेना के प्रस्थान के समय आप ने विस्तृत आदेश दिये। बताया कि यदि हज़रत ज़ैद शहीद हो जायें तो 'हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब' और उनके पश्चात् 'हज़रत अब्दुल्लाह बिन रुवाहा' सेनापति होंगे। उनके बाद वह होगा जिसे मुसलमान उस समय चुन लें।

उस समय आप ने समस्त सेना को संबोधित करके फ़रमाया-"ख़ुदा से डरते रहना। साथियों के साथ प्रेम और सहानुभूति का बरताव करना। अल्लाह की राह में अल्लाह ही के लिये उन लोगों से युद्ध करना जो उसके अस्तित्व को अस्वीकार करते हैं। न विश्वास घात करना, न अत्याचार और अन्याय। बालकों स्त्रियों तथा वृद्धों पर हाथ न उठाना। उन लोगों की हत्या न करना जो तुम से लड़ने न आये हों बल्कि अपने मठों में ध्यान ज्ञान में संलग्न हों। वृक्षों को हानि न पहुंचाना। घरों को न ढाना।"

यह सेना जुमादलऊला सन ८ हि० में मदीने से चली। अरब से मिला हुआ रूमी राज्य था। वह

उस समय संसार का सब से बड़ा राज्य गिना जाता था। उसका प्रभाव अरब के सीमा प्रदेशों पर भी था। सीमा के निकट के वासी बहुत से अरब क़बीलों ने ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया था। और उसके अधीन अधिकारियों के समान राज्य करते थे।

रूमियों को मुसलमानों के प्रस्थान का हाल मिला। उन्हों ने एक भारी सेना एकत्र की जो हर प्रकार अस्त्र शस्त्र से परिपूर्ण थी। और संख्या की दृष्टि से मुसलमानों की सेना को उस से कोई अनुपात न था। एक रात हज़रत 'ज़ैद बिन हारिस' ने अपनी सेना समेत एक स्थान पर डेरा डाला। रूमियों के आगे बढ़ने का हाल बराबर मिल रहा था। उन्हों ने प्रामर्श किया कि इस परिस्थिति का हाल मदीने भेज दिया जाये। या आप कुछ और सहायक सेना भेजेंगे या कोई अन्य आज्ञा देंगे। उसके अनुसार कार्यवाही होगी। आज्ञापालन तो प्रत्येक दशा में अनिवार्य है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन रुवाहा' ने साहस बढ़ाने के लिये कहा—"जो शंका इस समय आपको हो रही है वह तो साक्षात वही है जिस के हेतु हम मदीने से निकले थे अर्थात शहीद होना।

हम संख्या अथवा शक्ति के भरोसे शत्रु से थोड़े ही भिड़ते हैं। हम तो उस दीन के सहारे समर खेत में उतरते हैं जिसे अल्लाह पाक ने हमें प्रदान किया है। या तो अल्लाह इस दीन को विजय देगा या हम शहीद होंगे। और शहीद होने में विजयी होने से किसी प्रकार कम सम्मान नहीं हैं।

शहादत का भूका है मोमिन का हृदय।
उसे धन कमाने का लालच नहीं है॥
वह सत धर्म पर जान देने को बेकल।
नहीं सोचता है कभी जय पराजय॥

दूसरे दिन सेना आगे बढ़ी। रूमियों से मुडभेड़ हुई। मुसलमानों ने बड़ी वीरता, साहस तथ दृढ़ता से युद्ध किया, किन्तु वे रूमी सेना के सामने मुट्ठी भर व्यक्ति थे। मानो किसी असीम तूफ़ानी समुद्र में इने गिने कुछ जिवधारी पहाड़ के समान मौजों से उलझे हुये हों। हज़रत 'ज़ैद बिन हारिसा' शहीद होगये। हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब ने शहादत पाई। उनके शरीर पर प्रायः १०० घाव थे। और सब सामने थे। पीछे एक भी नहीं था। हज़रत 'अब्दुल्लाह बिन रुवाहा भी अपने स्वामी के दरबार

में सुर्खरू होकर पहुँचे।

अब 'हज़रत ख़ालिद बिन वलीद" ने झंडा हाथ में लिया। उन्हें स्वभावतः सेनापतित्व का बड़ा अच्छा ढंग था। उहुद की लड़ाई में उन्हीं की चतुरता से काफ़िरों के उखड़े हुये पाँव फिर से जम गये थे। अब मुसलमान होगये थे। उन्हों ने यहां भी बड़ी सूझ बूझ दिखलाई। एक दक्ष सेन नायक की भांति उन्हें शत्रु की शक्ति का ठीक अनुमान था। अपनी सेना को रूमियों के घेरे से साफ़ निकाल लाये। यह उन्हीं की निपुणता थी कि इतनी बड़ी सेना का सामना करने में केवल बारह मुसलमान शहीद हुये। जिव हानि की दृष्टि से यह हार हार नहीं थी।

आपको इस दुर्घटना का हाल मिला। लोगों को मस्जिद में एकत्र किया। मिम्बर पर चढ़े। नैनों से अश्रु धारा प्रवाहित थी। फ़रमाया-"अपनी वीर सेना का हाल सुनो। उसने वीरता पूर्वक शत्रु से युद्ध की। ज़ैद शहीद होगये, उनके लिये अल्लाह से प्रार्थना करो। जाफ़र बिन अबीतालिब स्वर्गवासी हुये। उनके लिये भी प्रार्थना करो। फिर अब्दुल्लाह

बिन रुवाहा आगे बढ़े, दृढ़ता-पूर्वक लड़ते रहे और अन्त में अपने जन्मदाता की सेवा में पहुँच गये। इनके लिये भी प्रार्थना करो। फिर ख़ालिद बिन वलीद ने तुम्हारी सेना का झंडा हाथ में लिया। वे अल्लाह की तलवारों में से एक तलवार हैं। परिणाम स्वरूप वे सफल लौटे।" उसी दिन से 'हज़रत खालिद' की उपाधि पड़ गई।

मस्जिद से आप 'हज़रत जाफ़र बिन अबीतालिब' के घर गये। उनकी पत्नी 'असमा बिन्त उमैस' से पूछा–"बच्चे कहां हैं? यहाँ बुलाओ।" बच्चे आकर चिमट गये। आप उनको गोद में लेकर प्यार करने लगे। हज़रत जाफ़र की पत्नी कहती हैं–"मैंने देखा आपकी दाढ़ी अश्रु से वितर है। मेरा माथा ठंका, पूछा--कुशल तो है? क्या रणक्षेत्र से कोई अशुभ समाचार आया है?" आप ने फ़रमाया--"वे सब शहीद होगये।" यह सुनना था कि उठ खड़ी हुईं और रोने पीटने लगीं। आप रोते जाते थे और नम्रता पूर्वक फ़रमाते--"असमा, बैन न करो। मुख पर थप्पड़ न मारो।" फिर प्रार्थना के लिये हाथ उठाया और बोले--"ऐ अल्लाह, मरने वाले को सर्वोत्तम

प्रतिफल प्रदान कर। उस के छोड़े हुये संबंधियों को उस भलाई के साथ रख, जिस के साथ तू ने अपने किसी भी नेक बन्दे के संबंधियों को रखा है।

'हज़रत फ़ातमा' के घर गये। वे शोक के मारे निढाल थीं। आप ने फ़रमाया—"जाफ़र जैसे व्यक्ति पर क्यों न रोना आये। उनके बच्चे शोक से बे हाल हैं। बेटी, उनके लिये कुछ पका कर भेज दो।"

मक्का की विजय। हुदैबिया की संधि की शर्तों में से एक यह भी थी कि दोनों पक्ष के लोग दस वर्ष तक एक दूसरे के विरुद्ध नहीं लड़ेंगे। विश्वनायक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने संधि की समस्त शर्तों के पालन का पूरा ध्यान रखा। 'हज़रत अबू-जनदल' रज़ियल्लाहु अनहु बेड़ियों में जकड़े हुये सामने आये, उन्हें वापस कर दिया। दूसरे वर्ष संधि के अनुसार मक्के गये, किन्तु तीन दिन से अधिक न ठहरे। मर्दों में से जो मुसलमान मक्के से मदीने अपने घर वालों की इच्छा के विरुद्ध आया, उसको लौटा दिया। इस पर उसका, आपका और सारे ही मुसलमानों का दिल दुखता था, परन्तु प्रतिज्ञा पालन का इतना ध्यान था कि कभी एक क्षण के लिये भी

संकोच नहीं किया।

संधि का विरोध संधि की चौथी शर्त के अनुसार 'बक्र' का क़बीला क़ुरैश से मिल गया था। और 'ख़ुज़ाआ' का क़बीला, जो पहले ही से मुसलमानों से सहानुभूति रखता था, उन से मिल गया। इन दोनों क़बीलों में प्राचीन शत्रुता थी। जितने दिन सारा अरब इस्लाम के विरुद्ध षड्यंत्रों तथा जंगी तय्यारियों में लगा रहा, यह आग दबी रही। सन्धि काल में यह आग भड़क उठी। बक्र के क़बीले को प्रतिबोध की धुन समाई। उन्हों ने क़ुरैश से सहायता माँगी। खुल्लम खुल्ला तो क़ुरैश का साहस न हुआ कि सन्धि का विरोध करते। और 'बक्र' की सहायता करके मुसलमानों से युद्ध की शंका मोल लेते। किन्तु चुपके चुपके उन्हों ने हर प्रकार से उनकी सहायता की। पर यह बात छुप न सकी। क़ुरैश के विश्वासघात का भेद खुल गया। 'ख़ुज़ाआ' के लोग आपकी सेवा में फ़रियादी बन कर आये। उधर मक्के वालों को चिन्ता हुई। उन्हों ने 'अबू सुफ़ियान' को अपना प्रतिनिधि बना कर भेजा। और सन्धि के पुनर्गठन की इच्छा प्रगट की। यह केवल

बहाना था। वास्तव में यह अनुमान लगाना था कि उनके वचनभंग का मुसलमानों पर क्या प्रभाव पड़ा अबूसुफ़ियान मदीने पहुंचे। उनकी अपनी बेटी 'उम्मे हबीबा' मुसलमान हो चुकी थीं। अल्लाह के दीन के लिये उन्हों ने मां बाप को छोड़ा, घरबार छोड़ा, हबश को हिजरत कर गईं। वहां उनके पति ईसाई होगये, उनको छोड़ा, अब 'अज़वाजि मुतह्हरात' में सम्मिलित थीं। वर्षों के बाद बाप को देखा था। जी भर आया होगा। किन्तु हृदय में अल्लाह और उसके रसूल का प्रेम घर कर चुका था। वहाँ अब किसी दूसरे के लिये स्थान कहाँ था। अबूसुफ़ियान को आते देखा तो झट वह कंबल लपेट कर अलग रख दिया जिस पर विश्वनायक सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का आसन रहा करता था। उन्हों ने मुस्कुरा कर पूछा–"बेटी, तुम ने इस कम्बल को क्यों लपेट कर अलग रख दिया ? मैं क़ुरैश का नामी सरदार हूं। यह कंबल मेरे बैठने योग्य नहीं है या यह कारण है कि मैं इस योग्य नहीं कि इस कंबल पर बैठने दिया जाऊँ ?" हज़रत 'उम्मे हबीबा' ने उत्तर दिया–"तुम मुशरिक हो। प्यारे रसूल के कंबल पर तुमको बैठने की आज्ञा

नहीं दी जा सकती।" उदासीन होकर बोले-"बेटी, तू हमें एक दम भूल गई।"

वे क्या करतीं। उनके पास तो सम्बन्ध की वही एक कसौटी थी, जिसके आधार पर समस्त सम्बन्धों को परखा जा सकता है। जिसके आधार पर नूह अलैहिस्सलाम का पुत्र उनका अपना पुत्र न रहा। और मक्के से निकाले हुये मुसलमान, अनसार के लिये अपने सहोदरों से बढ़ गये।

अबूसुफ़ियान मदीने में एक एक मुसलमान के पास गये। एड़ी चोटी का ज़ोर लगाया, बड़ी चापलूसी की, किन्तु कोई भी इस विषय में उन से वार्त्तालाप करने को तय्यार नहीं हुआ। किसी ने समर्थन करना स्वीकार नहीं किया। यह रंग देखा तो अबूसुफ़ियान मक्के लौट गये। वे सोच रहे थे कि यह विश्वासघात बड़ा महँगा पड़ेगा। देखिये इसका परिणाम क्या हो।

युद्ध की तय्यारी आरम्भ होगई | 'ख़ुज़ाआ' क़बीले के बीस बाईस व्यक्तियों की हत्या क़ुरैश तथा 'बक्र' ने मिलकर की थी। यह हाल मिलने के बाद ही से आप ने तय्यारी आरम्भ कर दी थी। मार्गों

पर पहरे बिठा दिये गये कि शत्रुओं को मदीने का कोई हाल न मिलने पाये। तय्यारी का पता न चले। क़ुरैश के लिये यह एक पहेली थी। भीतर भीतर क्या हो रहा है मालूम न होता। आने जाने वालों का ऐसा कड़ा निरीक्षण होता कि क्या मजाल जो साधारण सी बात भी बाहर चली जाये।

अन्त में १० रमज़ान सन् ८ हि० (पहली जनवरी सन् ६३० ई०) को अस्र की नमाज़ पढ़ कर आप ने मदीने से प्रस्थान किया। चलते समय आस-पास के क़बीलों को हाल भेज दिया गया। दस हज़ार सेना आप के साथ थी। उस में एक हज़ार के निकट सवार थे। मक्के वालों को इस सेना के आने का तनिक भी पता नहीं था। वे अब तक सर्वथा अज्ञात थे।

एक रात अबूसुफ़ियान कुछ साथियों के साथ पता लगाने के लिये निकला। उन्हों ने एक ओर देखा कि आग की ज्वाला से समस्त मरुभूमि प्रकाश-मयी हो रही है। वे बोले-"यह ख़ुज़ाआ की आग है जिस की ज्वाला आकाश चुम्बन कर रही है। जान पड़ता है उनका विचार युद्ध करने का है।"

और वास्तविकता यह थी कि 'मर्रुज्ज़हरान' नामक स्थान पर पहुंच कर आप ने साथियों को आदेश दिया कि प्रत्येक व्यक्ति अपने लिये पृथक अग्नि जलाये। इसके कारण शत्रु पर धाक बैठ जायेगी। परिणाम इच्छानुसार निकला। अबू सुफ़ियान तथा उनके साथी उसी अग्नि की ज्वाला देख कर दहल गये। उन्हों ने कहा–"इतनी बड़ी सेना और बल खाती हुई ज्वाला का ऐसा समुद्र तो हम ने अपने जीवन में कभी देखा ही नहीं था।

जैसा कि आपका ढंग था, आप ने समस्त सेना को कई भागों में बाँट दिया था। प्रत्येक टोली की अपनी ध्वजा थी। और दस हज़ार की सेना एक ढंग, क्रम तथा गम्भीरता पूर्वक आगे बढ़ रहा था। रात किसी प्रकार बीती। प्रातःकाल शूरवीरों की यह सेना मक्के की ओर बढ़ी। आप की ध्वजा का रंग काला था। उसको 'उक़ाब' कहते थे। हज़रत 'आइशा' की चादर फाड़ कर बनाया गया।

मुसलमान सेना का दृश्य | अबू सुफ़ियान एक टीले पर खड़े थे। दस हज़ार शूरवीरों की सेना उनके सामने से जा रही थी। उनमें पहचानी हुई सूरतें भी

थीं। जाने हुये लोग थे। भाई बन्द, सम्बन्धी, कुटुम्बी मित्र, शत्रु सब ही थे। वे भी थे जो रेत पर लिटाये गये थे, जिनको अल्लाह का दीन ग्रहण करने के अपराध में दण्ड दिये जाते थे। वे भी थे जिन्हों ने मक्के के मुशरिकों के कोड़े खाये थे। वे भी थे जिनको तपती हुई रेत पर घसीटा जाता था। रेत के चिह्न मिट गये, किन्तु ईमान का गौरव उनके मुखड़ों पर अब भी ज्यों का त्यों दमक रहा था। और वह उनके सामने से जा रहे थे। वह उमर भी थे जिनके बाहुबल पर मुशरिकों को घमण्ड था, फिर देववाणी के ओजस्वी शब्दों ने अंधकार से प्रकाश में खींच लिया। वह अब कुफ्र के लिये नंगी तलवार बने मक्के की ओर बढ़ रहे थे।

'हज़रत अली मुर्तज़ा' जा रहे थे। अबूसुफ़ियान सोचने लगे। अब से बहुत दिनों पहले अपने परिवार वालों के एक समूह में '.कुरैश' के एक नवयुवक ने कहा--"मैं अल्लाह का बंदा और उसका रसूल हूँ। तुम्हारे लिये उसका संदेश लाया हूँ। मूर्तिपूजा छोड़ दो। बंदना के योग्य केवल वही है, जो इस संसार का जन्मदाता तथा स्वामी है। मृत्यु के पश्चात्

अपने समस्त छोटे बड़े कार्यों के प्रति उसके निकट हिसाब देना होगा। इन तथ्यों पर आकाश एवं पृथ्वी सब साक्षी हैं।" छोटे बड़े, युवक, वृद्ध सब चुपचाप दम साधे बैठे थे। सहसा बहुत ही कम आयु का एक बालक उठा। यह उस नवयुवक का भाई था। उसने कहा—"यद्यपि मैं नेत्रों का रोगी हूं। मेरी टांगें पतली हैं। मेरी बांहें दुबली हैं। मगर भाईजान, फिर भी मैं इस शुभ कार्य में आपकी सहायता को तय्यार हूँ। बूढ़े लोग ठहाका मार कर हंस पड़े। क़ुरैश के प्रतापी कुटुम्ब तथा समस्त अरब के संयुक्त बल के सामने यह नवयुवक एवं यह छोटा सा बालक! मानो किसी तीव्र तथा प्रचंड आँधी के सामने दो तिनके!

विचार क्रम टूट गया। यह 'अबूबक्र सिद्दीक़' जा रहे थे। वही तो हैं, जिन्हों ने एक बार काबे के आँगन में अल्लाह का नाम लिया और लोगों ने उनके ईमान का मूल्य उनके शरीर से वसूल कर लिया। चोटों के मारे चिहरा पहचाना न जाता था। तीसरे पहर तक चेत न हुआ। और एक दिन वह भी आया कि रात के सन्नाटे में घर छोड़ कर निकले कि फिर

वर्षों मक्के की घाटियों और पहाड़ों की सूरत को तरस गए। और सबसे अंत में इस भारी सेना का सर्वोच्च महा प्रतापी नायक अपने साथ अपने दास के पुत्र के बठलाये हुए, एक साधारण कजावे और फटी पुरानी चादर पर। वह सेना जिस की तलवारों की झंकार से शत्रु का कलेजा दहल रहा था, जिस की ध्वजा की प्रत्येक लहर मुशरिकों के नेत्रों से मानो दृष्टि उचक ले रही थी। जिसके सरदारों 'समर गीतों' से सीनो के भीतर उथल-पुथल मची हुई थी। दस हज़ार सूर्माओं की इस सेना का नायक कजावे पर सिर झुकाए अपने स्वामी के सामने गिड़गिड़ा रहा था। "हे स्वामी जीवन तो वास्तव में बस प्रलोक का जीवन है।"

अबूसूफ़ियान सोचने लगे। "यह वही नवयुवक तो है जिस के चचा से कहा गया था" हम से एक सुन्दर और मोटा ताज़ा युवक लेकर उसको अपना पुत्र बना लो। और भतीजे को हमें दे दो। हम उसे मार डालें। एक दिन काबे में खुदा के लिये सिजदे में पड़ा था। किसी ने ओझ लाकर गरदन पर डाल दी। और नन्हीं सी कन्या के अतिरिक्त कोई न था

जो उसकी सहायता को पहुंचता। बाजारों तथा मेलों में बच्चे उस के पीछे शोर मचाते, बूढ़े उस को पागल कवि तथा ऐन्द्रजालिक कहते। अबूलहब और अबूजहल तो उस के खून के प्यासे थे। अबूतालिब की घाटी और उसका बाइकाट, फिर 'ताइफ़' की गलियां और वह पथराव, उस की लहू लुहान एड़ियाँ। चचा प्रलोक वासी हुए, पतिव्रता धर्म पत्नि स्वर्ग को सिधारीं। सारे लौकिक सहारे टूट गए। किन्तु वह नवयुवक अपने मार्ग पर अग्रसर रहा। अपने कर्त्तव्य पालन में अटल रहा। और एक प्रातः काल जब शत्रुओं ने उस का घर घेर रखा था, उसने अपनी जन्म-भूमि को भी अल्लाह के लिये त्याग दिया। उसने मक्के की ओर मुड़ कर देखा, 'हे पृथ्वी पर मेरे सर्व-प्रिय नगर, तेरे वासी मुझे रहने नहीं देते।' उसकी आँखों में अश्रु थे, किन्तु उसके हृदय में वह दृढ़ संकल्प भी था, जो अल्लाह ने उसको अपना सच्चा नबी बनाकर उसके स्वभाव में रखा था। बद्र के रण-क्षेत्र में तीन सौ तेरह योद्धाओं का नायक आज मक्के में दस हज़ार त्यागी सूरमाओं के साथ प्रवेश कर रहा था।

अबू सुफ़ियान उस टीले पर खड़े थे। बूक़ुबैस की चोटियां सिर उठाए आश्चर्य चकित तक रही थीं। दो साथी एक कंदरा से निकले। उनके पीछे उनका गुलाम था। असीम मरुभूमि में उनकी गर्द उठकर बैठ गई। वे दृष्टि की सीमा के बाहर निकल गए। और आज आठ वर्ष के बाद।

वह पुकार जिसे सफ़ा की पहाड़ी ने अब तक अपने सीनों में सुरक्षित रखा था, उस से घाटियां और पर्वत गूँज रहे थे। सत्य फैल कर रहा। प्रकाश ने अंधकार पर विजय पाई। सत्यासत्य के संग्राम से सत्य विजयी होकर निकला।

आप ने सेना के सरदारों को कड़ी मनाही करदी थी कि जो तुम से छेड़ छाड़ न करे, कदाचित उस पर हाथ न उठाना। हज़रत ख़ालिद बिन वलीद ने नगर के जिस भाग से प्रवेश किया, वहां लोगों ने तीरों की बौछाड़ आरम्भ करदी। विवश होकर उन्हें तथा उनके साथियों को उत्तर देना पड़ा। 'हज़रत अबूसुफ़ियान' बीच में पड़े झगड़ा समाप्त हुआ। उन्हों ने घोषणा की, "जो अपने द्वार बन्द करले वह सुरक्षित है। जो मेरे घर में शरण ले ले उसे कोई शंका नहीं।

जो 'हरम' में चला जाय उसे कोई नहीं छेड़ेगा।" आप को इस झड़प का हाल मिला तो आपने हज़रत खालिद से कैफ़ियत तलब की उन्होंने बताया कि हमारी ओर से पहल नहीं हुई है। वे स्वयं आक्रमण कर बैठे। हम क्या करते आप ने फरमाया "अल्लाह जो करता है, अच्छा ही करता है।" १५ आदमी ऐसे थे जिन्हें आप ने शरण नहीं दिया था। उन में से तीन पुरुष और एक स्त्री मारे गये शेष मुसलमान हो गये उन्हें छोड़ दिया गया।

मक्के में प्रवेश करने के बाद आप ने उस्मान बिन तलहा को बुलाया। उनके पास काबे की कुंजी रहती थी। उन से कुंजी ली। भीतर प्रवेश किया, फिर द्वार पर खड़े होकर यह भाषण दिया। "अल्लाह एक है। उस का कोई साभी नहीं। उसने अपना प्रण सच कर दिखाया और अपने बन्दे की सहायता की। अकेले समस्त जत्थों को पराजित किया। हर प्रकार के घमंड खून तथा माल के दावे मेरे पांव के नीचे हैं। हे कुरैश तुम्हारे अज्ञानता के घमंड और कुल की बड़ाई के गुमान को अल्लाह ने मिटा दिया। समस्त मानव 'आदम' की संतान हैं। और आदम मट्टी से बने थे।

क्षमा का अद्‌भुत उदाहरण। वे लोग जिन्हों ने इस्लाम और स्वयं विश्व नायक सल्लल्लाहुअलैहि वसल्लम की शत्रुता में कोई कसर नहीं उठा रखी थी हरास्त और भयभीत सामने खड़े थे। आपने उनकी ओर देखा और फरमाया– "तुम्हारा क्या विचार है। मैं तुम्हारे साथ कैसा बरताव करूँगा।" उन्होंने उत्तर दिया, "आप हमारे सुशील तथा विनम्र भाई और संबन्धी हैं।" आज्ञा हुई "जाओ तुम सब मुक्त हो। तुम से किसी प्रकार का प्रतिषोध नहीं लिया जायगा। तत्पश्चात आप ने काबे की कुंजी 'उस्मान बिन तलहा' को लौटा दी, जो आज तक उन्हीं के परिवार में चली आती है।

शिर्क का अन्त। मक्के की वजह से एक नया युग आरंभ हुआ। मक्का समस्त अरब का केन्द्र था। वहाँ से मूर्ति पूजा का अंत हो जाने से पूरे अरब से उसका अंत हो गया। काबे की मूर्तियों के साथ ही समस्त अरब की मूर्तियाँ मट्टी में मिल गईं। आप ने मक्के में १८ दिन निवास किया।

हुनैन की लड़ाई। आप अभी मक्के ही में थे कि

हाल मिला कि कबीला 'हवाज़िन' और उस के साथ 'ताइफ़' के कुछ और कबीले मुसलमानों पर आक्रमण की तय्यारी कर रहे हैं। ६ शव्वाल सन् ८ हि० (२८ जनवरी सन् ६२० ई०) शनिवार को आपने मक्के से प्रस्थान किया। आप के साथ बारह हज़ार योद्धा थे। दस हज़ार वे जो मदीने से आये थे और दो हज़ार मक्के की विजय के बाद सम्मिलित हो गए। कवच, तलवारों और भाले आदि हथियार आवश्यकतानुसार साथ थे। 'हुनैन' नामक स्थान पर एक घाटी में प्रवेश कर रहे थे कि चारों ओर से शत्रु ने तीरों की वर्षा आरम्भ कर दी। मुसलमान जम कर लड़े। शत्रु के पांव उखड़ गये। मुसलमानों ने सोचा, 'आज हमारी इस भारी संख्या के सामने कौन टिक सकता है। इस विचार का आना था युद्ध का नक़शा बदल गया। जीत हार में परिवर्तित हो गई। वही हुआ जो कई वर्ष पूर्व उहद की लड़ाई में हुआ था। समस्त सेना अस्त व्यस्त हो गई। किन्तु विश्वनायक सल्लल्लाहु अलैहिवसल्लम और उनके कुछ त्याग शील साथी अपने स्थान पर पर्वत समान अटल थे। आप ने हज़रत अब्बास को आज्ञा दी। उन की आवाज़

बहुत भारी थी। उन्हों ने पुकारा तो लोग पलटे। सौ आदमी एकत्र हो गए और पुनः जो आक्रमण किया तो शत्रु सर्वथा प्रास्त हो गया। जीत मुसलमानों की हुई। ग़नीमत में ६ हज़ार स्त्रियां तथा बालक, चौबीस हज़ार ऊँट, चालीस हज़ार बकरियां और बड़ी भारी मात्रा में चांदी हाथ आई। 'हवाज़िन' का क़बीला वही था जिस से आप की दाई हलीमा का संबंध था। मुसलमानों ने अपनी खुशी से उनके घर वालों को बिना किसी बदले के वापिस कर दिया।

तबूक की चढ़ाई | मूता की लड़ाई के प्रतिषोध के लिए ईसाई अरबों की एक बड़ी सेना तय्यार की गई। रोम के राजा 'कैसर' से भी सहायता माँगी गई। उसने चालीस हज़ार सेना भेजी। विचार था कि मदीने पर आक्रमण किया जाये। यह हाल मिला तो मदीने के वासी चिन्तित हुए। आपने भी युद्ध की तय्यारी आरंभ की। भीषण अकाल और अत्यन्त गर्मी का समय था। इस कारण सेना की तय्यारी में बड़ी कठिनाई हुई। पांचवे कालम वाले (मुनफ़िक) लोगों को बहकाया कि 'इस गर्मी में कहाँ जा रहे हो।' फिर भी आपके त्याग शील साथियों की चेष्ठा से

सेना की सामग्री जुटाई गई। हज़रत अबूबक्र ने घर में जो कुछ था लाकर आपकी सेवा में रख दिया। आप ने पूछा--"बाल बच्चों के लिये क्या छोड़ा ?" तो बोले--"अल्लाह का नाम।" हज़रत उमर ने अपनी आधी सम्पत्ति अल्लाह की राह में देदी। इसी प्रकार आपके सच्चे साथियों में जिस से जो कुछ बन पड़ा लाया और आप रजब ९ हि० में (सितम्बर अक्तूबर ६३० ई०) प्रायः तीस हज़ार सेना लेकर चले और तबूक नामक स्थान पर पहुंच कर ठहरे। दस दिन तक वहां ठहरे रहे किन्तु कोई सेना लड़ने नहीं आई। फिर आप वापस मदीने लौट आए।

आपके पुत्र हज़रत इबराहीम का देहान्त। रबी-उल-अव्वल सन १० हि० (जून ६३१ ई०) में आप के पुत्र हज़रत इबराहीम का देहान्त हुआ। अन्तिम घड़ी सिर आप की गोद में था। आपके नेत्रों में अश्रु आगये। लोगों को आश्चर्य हुआ। आप ने फ़रमाया-"करुणा की प्रवृत्ति मानव स्वभाव है। जिस का हृदय करुणा रहित है वह मनुष्य नहीं। हाँ, चिल्लाना, बैन करना, छाती पीटना, बाल नोचना आदि ठीक नहीं।" फिर बोले--"इबराहीम, तुम्हारा बिछड़ना

हमको खलता है। किन्तु ईश्वर का निर्णय प्रत्येक दशा में हमें स्वीकार है।"

जिस दिन आपके पुत्र का देहान्त हुआ, संयोग-वश उसी दिन सूर्य में ग्रहण लगा। लोगों में यह विचार फैल गया कि उनकी मृत्यु के कारण ऐसा हुआ है। इस दुर्घटना पर सूर्य को भी शोक हुआ है। आप ने यह हाल सुना तो फरमाया सूर्य तथा चन्द्रमा का ग्रहण अल्लाह की महिमा की ओर संकेत करने वाले दो चिह्न हैं। किसी के जीवन मरण से इसे कोई संबंध नहीं।

हज्जतुल विदा (अन्तिम हज) 'ज़िलहिज्जा' सन् १० हि० में आपने 'हिजरत' के बाद अपना प्रथम और अंतिम हज किया। इसको हज्जतुल विदा या रुख़सती हज इस कारण कहते हैं कि उस में जो भाषण आपने दिया था उसके आरम्भ में इस ओर संकेत भी था कि यह आप का अंतिम हज है।

२५ ज़ीकादा को आप मदीने से चले। ४ ज़िल-हिज्जा को प्रातःकाल रविवार के दिन आपने मक्के में प्रवेश किया। आप के साथ प्रायः ६० हज़ार

मुसलमान हज के लिए आए थे। मक्के में और लोग भीसम्मिलित होगऐ। इस प्रकार यह संख्या बहुत अधिक हो गई। इस अवसर पर आपने एक भाषण दिया। यह भाषण अति प्रसंग युक्त था। कुरैश तथा समस्त अरब में फैले हुए बहुत से रीति रिवाजों की निन्दा करते हुए इस्लामी सिद्धान्तों का निचोड़ सबके सामने रख दिया। आप ने फ़रमाया :--

(१) लोगो! ध्यान से सुनो और याद रखो। एक मुसलमान का प्राण, सम्पत्ति तथा मान दूसरे के लिए उसी प्रकार मान्य है जिस प्रकार तुम आज के दिन, इस मास और इस स्थान का आदर करते हो। अल्लाह तुम्हारे प्रत्येक कार्य का हिसाब लेगा। सावधान! मेरे पीछे पथ भ्रष्ट न हो जाना। कि एक दूसरे की गरदन मारने लगो।

(२) जिस प्रकार तुम्हारे प्रति स्त्रियों के कुछ कर्त्तव्य हैं, उसी प्रकार स्त्रियों के सम्बन्ध में तुम्हारे भी कुछ कर्त्तव्य हैं। उनके साथ नम्रता पूर्वक व्यवहार करना। और उनके प्रति अल्लाह से डरते रहना।

(३) दासों के साथ भी अच्छा व्यवहार करना। जो स्वयं खाओ वही उनको भी खिलाना। जो स्वयं

पहनो वही उनको भी पहनाना। उनसे कोई भूल चूक हो तो क्षमा करना। या बहुत क्रोध हो तो उन को अलग कर देना। वे भी अल्लाह के बन्दे हैं। उन पर अन्याय न करना।

[४] न कोई अरब का वासी किसी बाहर वाले से बढ़कर है। न कोई बाहर वाला किसी अरब वाले से बढ़कर है। सब मुसलमान परस्पर एक दूसरे के बराबर हैं। हाँ, तुम में से जो अल्लाह से अधिक डरेगा उस का स्थान अल्लाह के निकट अधिक ऊँचा होगा।

(५) मैं तुम्हारे बीच अल्लाह की पवित्र किताब कुर्आन छोड़े जाता हूँ। यदि तुम इसको दृढ़ता पूर्वक थामे रहोगे तो मेरे पीछे कदापि पथ भ्रष्ठ न होगे।

(६) लोगो, स्वार्थ त्याग, मुसलमानों का शुभ-चिन्तन और आपस में मेल जोल ये तीन सिद्धान्त वे हैं जिन के सेवन से हृदय निर्मल रहता है।

(७) तुम्हारा कर्त्तव्य है कि मेरा यह कथन उन लोगों तक पहुँचादो जो यहाँ उपस्थित नहीं हैं। क्यों कि बहुत से श्रोत वक्ता की अपेक्षा अधिक स्मरण शक्ति तथा बुद्धि रखते हैं।

तत्पश्चात आप ने लोगों से पूछा—"क़यामत के

दिन तुम से अल्लाह पूछेगा मैंने उसके आदेश तुम तक पहुँचाए थे या नहीं ? " तो तुम क्या उत्तर दोगे" "सबने एक स्वर में कहा-" ऐ अल्लाह के प्रिय रसूल हम लोग साक्षी हैं कि आप ने अल्लाह के आदेश हम तक पहुँचादिए। और रसूल होने के नाते अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया।"

यह सुन कर आपने आकाश की ओर देखा, हाथ उठाए और तीन बार फ़रमाया-"ऐ अल्लाह तू भी साक्षी रह।"

परलोक गमन | १२ रबीउल अव्वल सन ११ हि० (८ जून ६३२ ई०) सोमवार के दिन संध्या के समय चांद के हिसाब से ६३ वर्ष की आयु में आपने इस संसार को त्याग दिया मृत्यु से पूर्व रोग्य अवस्था में एक दिन आप मिंबर पर आये और फ़रमाया---

"ऐ मुहाजिर लोगो, इन्सान के साथ भलाई का व्यवहार करना। अब मुसलमानों की संख्या बढ़ रही हैकिन्तु मेरे प्रथम सहायक यही लोग हैं। इन्हीं के घर मैंने शरण लिया। इनमें से जो सुशील हैं। उन पर उपकार करना। और जिन से कुछ भूल चूक हो जाय

उन को क्षमा करना। मेरेघर वालों की प्रतिष्ठा का भी ध्यान रखना। और सन्मार्ग पर दृढ़ रहना।"

मुसलमानों की सार्वजनिक सभा से यह आप का अन्तिम संबोधन था।

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम।

इस्लाम से पूर्व रेत के बड़े बड़े समुद्रों ने अरब देश को शेष संसार से पृथक् कर रखा था। अरब व्यापारी ऊँटों पर कई कई मास की राह चलकर दूसरे देशोंमें जाते थे। किन्तु वहाँ वालों से क्रय विक्रय के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार का संबन्ध नहीं रखते थे। स्वयं अरबों में कोई उत्तम सभ्यत. नहीं थी। न न कोई विद्यालय था, न पुस्तकालय और न लोगों में विद्या की चर्चा थी।

वहां कोई ढंग का राज्य नहीं था। न ही कोई नियम क़ानून था। प्रत्येक क़बीला अपने स्थान पर स्वतन्त्र था। खुले आम लूट मार होती थी और सदा भीषण युद्ध होते रहते थे। मानव-जीव का कोई मूल्य न था। जिसका जिस पर बस चलता, उसे मार डालता, और उसके माल पर अधिकार जमा लेता।

शुभाचरण तथा सभ्यता की उन्हें हवा तक नहीं लगी थी। कुकर्म, मदिरा पान तथा जुयेबाज़ी का खूब चलन था। अज्ञान का यह हाल था कि सब लोग पत्थरों को पूजते थे। राह चलते कोई अच्छा चिकना पत्थर मिल जाता तो उसी को आगे रखकर पूज लेते। जो सिर किसी के आगे नहीं झुकता था वह पत्थर के आगे झुक जाता था, और यह समझा जाता था कि यह पत्थर उनकी सहायता करेंगे।

इस्लाम के पश्चात् देश का प्रबन्ध ही नहीं बदला अपितु विचार-धारा बदल गई, मनोवृत्तियाँ बदल गईं। जीवन मार्ग बदल गया, आचरण का संसार बदल गया, समस्त जाति की काया पलट गई जो भ्रष्टाचारी थे, वे स्त्रियों के सतित्व के रक्षक बन गये। जो भारी मद्यप थे, वे मद्य-निषेध आन्दोलन के कार्य कर्त्ता बन गए। जो चोर और उचक्के थे वे ऐसे साधु बन गए कि अपने मित्रों के घर खाने में उन्हें इस लिए संकोच होने लगा कि कहीं यह भी अन्याय में न गिन लिया जाय। यहाँ तक कि स्वयं अल्लाह को इसके प्रति आश्वाहन देना पड़ा कि इस में कोई आपत्ति नहीं। जो डाकू और लुटेरे थे, वे

धर्मात्मा बन गए। जो ऐसे कठोर और निर्दयी थे कि अपनी कन्याओं को जीवित गाड़ देते थे वे ऐसे दया-शील और करुणामय हो गए कि कसी पक्षी तक को निर्दयता पूर्वक ज़बह होना नहीं देख सकते थे। जिनके कान नियम और कानून के नाम तक से अपरिचित् थे, उनके भीतर नियम का ऐसा मान उत्पन्न हो गया कि जिन दोषों का दंड हाथ काटना या पत्थर मार-मार कर प्राण ले लेना था उनको स्वयं आकर स्वीकार करते और आग्रह करते कि दंड देकर उन्हें पवित्र बना दिया जाए तकि वे चोर या कुकर्मी बनकर अल्लाह के न्यायालय में न लाए जाएं। उनमें ऐसे सिपाही उत्पन्न हुए जो वेतन लेकर नहीं लड़ते थे, अपितु उस सिद्धान्त के हेतु जिस पर वे ईमान लाए थे अपने ख़र्च पर रणक्षेत्र में जाते और फिर जो ग़नीमत का माल हाथ लगता वह सब का सब अपने नायक के आगे लाकर डाल देते।

अब भी ऐसा हो सकता है यदि सच्चा ईमान और दृढ़ विश्वास हो, दीन का ज्ञान हो, दृढ़ संकल्प तथा निर्णय शक्ति हो, व्यक्तिगत लाभों तथा उमंगों

का बलिदान हो। ऐसे साहसी लोग हों, जो सत्य पर ईमान लाने के पश्चात फिर उसी के हो रहे, संसार में चाहे जो भी हुआ करे, वे अपने मार्ग से एक इंच न हटें, सम्बन्धियों तथा मित्रों के बिछुड़ जाने की चिन्ता न करें, जो वस्तु भी उनकी राह का रोड़ा बने, उसे ठोकर मार दें। ऐसे ही लोगों ने पहले भी अल्लाह का नाम ऊँचा किया था। ऐसे ही लोग आज भी करेंगे। और यह कार्य ऐसे ही लोगों से संभव है।

हो जो इब्राहीम का ईमान उत्पन्न आज भी।
आग करले फूल का स्वभाव ग्रहण आज भी॥

हमारी अन्य पुस्तकें

(१) इस्लाम प्रबोधिनी २)
(२) विश्व पथ-प्रदर्शक -)
(३) सत्य धर्म -)
(४) शान्ति मार्ग)
(५) बनाव बिगाड़ ।)
(६) जीवन मृत्यु के पश्चात् ≡)
(७) इस्लाम और अज्ञान ।=)
(८) क़ुरआन और पैग़म्बर [illegible])
(९) नैतिक दृष्टिकोण ।)
(१०) साम्प्रदायिक दंगे ।)
(११) इस्लामी जीवन-व्यवस्था ॥)
(१२) भारत का नव निर्माण ॥=)
(१३) नमाज़ ॥)
(१४) मुअल्लिमे नमाज़ ॥)
(१५) इस्लाम का परिचय १॥)
(१६) पारा अम (सटीक) १॥)
(१७) प्यारे रसूल ।=)
(१८) ईमान, इस्लाम, आख़िरत, अल्लाह के नबी आदि पूरा सेट १)
(१९) हमारी पोथी प्राइमर, भाग. १, २, ३, पूरा सेट २॥)

मकतबा जमाअत इस्लामी (हिन्द) रामपुर उ० प्र०